भूमिका

छत्तीसगढ़ के सांस्कृतिक पृष्टभूमि में यहाँ के लोक जीवन का विशेष महत्व रहा है, इसके अनुशीलन से विचारो, भावनाओं तथा विश्वासों का आश्रय लेना एक स्वाभाविक अभिव्यक्ति है, प्राचीन काल से ही तात्कालिक धर्म साधनाओं तथा जीवन के विविध्द सांस्कृतिक क्रिया–कलापों का इस अंचल में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्रभाव पड़ता रहा है चाहे वह लोक गीत हो, लोक कथा या लोक गाथा। इनकी प्राचीन परम्परा उज्जवल रही है। इन्ही परम्पराओं में अंचल की सांस्कृतिक चेतना के दर्शन होते है।

छत्तोसगढ़ी लोकगाथा, छत्तीसगढ़ में प्रचलित विविध संस्कारों पर्वो, त्यौहारों, आध्यात्मिक एवं सामाजिक अवस्थाओं के अवसर पर प्रस्तुत मौखिक परम्परा में प्रवाहित गाथा है, जो मनुष्य की भावनाओं के विकास के साथ सतत् गतिमान है। परधान तथा देवार जाति इस परम्परा के सत्र पात माने जाते है यह गायन परंपरा वाचिक रूप से पीढ़ी दर पीढ़ी विकसित होती रही जिसे एकल माध्यम से प्रस्तुत किया जाता रहा।

छत्तीसगढ़ी लोकगाथाओं में पंडवानी सबसे ज्यादा खेली (प्रस्तुत) जाती है क्योंकि महाभारत के कथानक को गीत संगीत तथा अभिनय के ताने–बाने के साथ प्रस्तुत किया जाता है। पंडवानी में नाट्य तत्व की प्रधानता देखने को मिलती है इसलिये रंगमंच में पंडवानी शैली का सफल प्रयोग संभव हो पाया तथा कई निर्देशकों ने अपने नाटकों में इनका प्रयोग किया है।

मुख्य रूप से पंडवानी की दो शैली है वैदिक और कापालिक। वैदिक शैली में कलाकार सबला सिंह द्वारा अनुवादित हिंदी महाभारत का अनुसरण करते है तथा कापालिक शैली के गाथाकार, लोक में प्रचलित कथाओं को गा कर अपनी प्रस्तुती करते है। पंडवानी की प्रस्तुति बैठकर भी की जाती है और खड़े होकर भी कुछ कलाकार इसे घुटनों के बल

खड़े होकर भी प्रस्तुत करते है। पंडवानी की प्रस्तुति भाव प्रधान होती है तथा आंगिक और वाचिक माध्यम से कथा को विस्तार दिया जाता है।

कथाकार हूँकार मारते हुए कभी अर्जुन की भूमिका में होते है, तो कभी भीम की तरह गदा लिए हुए, दुर्योधन को ललकार रहे होते हैं, द्रौपती अपनी लाज बचाने के लिए कृष्ण को पुकारती है एवं अभिमन्यु के बाणों से आकाश में वर्षा होने लगती है कहीं घोडे हिनहिना रहे होते है तो कहीं हाथियों के हउ... हउ... जैसी आवाजों से नसों में रक्त का संचार बढ़ने लगता है यह गाथाकार के जादुई शब्द ही है जिसके कारण एक–एक दृश्य फिल्म की तरह दिखाई देने लगता है जिसे हम थ्रीडी फिल्म भी कह सकते है क्योंकि सभी दृष्य आँखों के सामने ही घटते हुए प्रतीत होते है।

बहोत से विद्वानों ने पंडवानी को एकल नाट्य भी कहा है अब तो पंडवानो शैली को नाट्य विधा के रूप में भी लिया जाने लगा है जिसका प्रमुख कारण तीजन बाई और रितु वर्मा जैसे कलाकार है इनकी प्रस्तुति अभिनय के उत्कृष्ट शिखर को छूती हुई तथा नये सिध्दातों को प्रतिपादित कर रही है, एक महिला कलाकार होते हुए भी इन्होने पुरूष पात्रों के चरित्र को अपने अभिनय के माध्यम से साकार रूप दिया है, महाभारत के सभी पात्रों को अपने भाव–भंगिमा से जीवंत रूप देना और दर्शकों को रसानुभूति करा देना ये इनका अभिनय कौशल ही है जो इन्हें भारतीय रंगमंच में श्रेष्ठ अभिनेत्री के रूप में स्थापित करती है।

पंडवानी में नवीन प्रयोग होते रहते है। शांति बाई चेलक आज भी अपनी प्रस्तुति में नई सम्भावनाओं की तलाश करते हुए दिखाई देती है उन्होने भानू भारती द्वारा निर्देशित नाटक में पंडवानी शैली को नाटक के साथ प्रस्तुत किया यह प्रयोग की नई सम्भावना तलाशने जैसा ही है। प्रयोग की परम्परा में झाडू राम देवांगन, पूना राम निसाद, रेवा राम साहू जैसे कलाकारों का नाम सबसे ऊपर लिया जा सकता है। क्योंकि इन्होने पंडवानी को देश ही नही बल्कि विदेशों में भी प्रसिध्दी दिलाई है।

शिखर की उचाईयों को छूने के बाद भी वतमान समय में पंडवानी अपनी लोक–प्रियता खोती जा रही है क्योंकि नये यूवा कलाकारों की उपस्थिति दर्ज नही हो पा रही है, तथा तीजन बाई ऋतु वर्मा जैसे कलाकार भी निकलकर नही आ रहे है जिसके परिणाम स्वरूप पंडवानी का आयोजन सरकारी आयोजनों तक ही समिति दिखाई देने लगा है। इस तरह का आयोजन किसी अतिथि, अफसर या कोई बड़े राजनीतिक सम्मेलन के लिए किया जाता है जिसमें छत्तीसगढ़ी लोकसंस्कृति की झाकी की तरह पंडवानी को प्रस्तुत किया जाता है।

ऐसा नही है कि पंडवानी के संरक्षण को लेकर कोई काम नही कर रहा है, इसे विलुप्ती से बचाने के लिए और भविष्य में गतिशीलता प्रदान करने के लिए तीजन बाई और शांति बाई चेलक जैसे कलाकार पंडवानी शैली का रायपुर और दुर्ग में साथ ही छत्तीसगढ़ के विभिन्न जिलों में कार्यशाला का आयोजन लगातार करते रहते है इसी तरह के प्रयास में सरकार की भी भागीदारी होनी चाहिए।

पंडवानी में नई संभावना तलाशी जा रही है, शोधार्थी इस शोध कार्य से पंडवानी की प्रस्तुति में प्रयुक्त नाट्य तत्वों का अध्ययन करना चाहता है, जिससे पंडवानी के सम्बन्ध में भविष्य के लिए नई संभावनाएँ खोजी जा सके। छत्तीसगढ़ी लोककला को समझने में मेरी गहरी रूचि रही है मेरी कोशिश रहेगी की आने वाले समय में लोकगाथा पंडवानी का रंगमंचीय प्रयोग कर सकूं, इसके लिए मुझे लोकगाथा पंडवानी को समझना जरूरी था।

शोध कार्य में पंडवानी का ऐतिहासिक परिचय देते हुए एवं पंडवानी की प्रस्तुति में निहित नाट्य तत्वों को उद्घाटित किया गया है, जिसके लिए पंडवानी की प्रस्तुति शैली, संगीत–पक्ष, वेश–भूषा, अभिनय शैली, पात्र–योजना, संवाद–योजना, रस एवं रंगमंचीय प्रयोग की संभावनाए छानना जरूरी था।

संपूर्ण शोध कार्य को पांच भागों में विभक्त किया गया है।

प्रथम अध्यायः लोकगाथा के उद्भव विकास की चर्चा करते हुए लोकगाथा पंडवानी उद्भव और विकास को भी लिया गया है जिसमें परिभाषा और विशेषता भी शामिल है।

द्वितीय अध्यायः लोकगाथा पंडवानी के शिल्प और स्वरूप में, पंडवानी की प्रस्तुति शैली, संगीत पक्ष, वेश भूषा, और पंडवानी के मंच की चर्चा की गई है।

तृतीय अध्याय : लोकगाथा पंडवानी में नाटकीय तत्वों का अध्ययन किया गया है जिसमें कथोपकथन, पात्र परिचय, अभिनय शैली और रस का संक्षिप्त अध्ययन किया गया है।

चतुर्थ अध्यायः प्रस्तुत अध्याय में लोकगाथा पंडवानी के रंगमंचीय प्रयोग के बारे में चर्चा करते हुए भविष्य को लेकर पंडवानी की संभावना पर भी विचार किया गया है।

पंचम अध्यायः अंत में साक्षात्कार, उपसंहार, छाया प्रति और सन्दर्भ ग्रन्थ सूची दी गई।

इस शोध कार्य के माध्यम से वर्तमान में काम कर रहे युवा रंगकर्मियों, शोधार्थियो को पंडवानी शैली में निहित नाट्य तत्व का ज्ञान होगा और भविष्य में युवा रंगकर्मी इस शैली के प्रयोग का अपने नाट्य निर्देशन में उपयोग कर सकेंगे अतः प्रस्तुत शोध कार्य में छत्तीसगढ़ के सामाजिक कार्यकर्ताओं, रंगकर्मियों एवं साहित्यकार से लोकगाथा पंडवानी विषय के सन्दर्भ में साक्षात्कार शामिल किया गया है।

———000———

अध्याय – 1

लोकगाथा पंडवानी की परिभाषा एवं विशेषता

1 लोक गाथा

2 पंडवानी और नामकरण

3 उद्‌भव और विकास

4 पंडवानी की विशेषता

छत्तीसगढ़ी लोक मंडलियों में छत्तीसगढ़ी लोक गाथाओं का प्रमुख स्थान है। छत्तीसगढ़ी अंचल के प्रायः समस्त प्रधान गीतों में किसी न किसी रूप में लोक गाथा का समावेश है इन लोक गाथाओं का निर्माण काल संवत 1100 से 1500 तक माना गया है। अतः छत्तीसगढ़ो लोक गाथाओं में मध्य युगीन स्थितियों का चित्रण मिलता है इनमें वणित घटनाओं के आधार पर ही इतिहासकारों ने छत्तीसगढ़ी लोक गाथाओं का निर्माण काल मध्य युग माना है। लोक गाथा छत्तीसगढ़ की सर्वाधिक विधान है।

लोक गाथा की उत्पत्ति :– प्रत्येक देश प्रात राज्य की अपनी संस्कृति होती है लोक गाथा लोक संस्कृति का एक महत्वपूर्ण अंग है। लोक गाथा की उत्पत्ति के संबंध में कोई निश्चित प्रमाण उपलब्ध नही है विद्वानों द्वारा इसे समय–समय पर परिभाषित किया जाता रहा है डॉ. सत्यव्रत सिन्हा ने गाथा की उत्पत्ति के संबंध मे अपना मत कुछ इस तरह दिया है। ''गाथा शब्द का प्रचार उत्तरी भारत में बहुत होता है इसमें कथात्मकता एवं गेयता दोनो का समावेश है साथ ही यह प्राचीन परम्परा अनुगत शब्द भी है। साधारण अर्थ में ''गाथा'' शब्द का शाब्दिक अर्थ कथा कह सकते है। परन्तु कथा और गाथा में व्यापक अन्तर है। कथा कहानी मात्र है जबकि गाथाओं में वे कहानियां सम्मिलित की जा सकती है जो अत्यधिक विकसित लम्बी हो तथा जिसके कहने सुनने में अधिक लगे और जो इतिहास से सम्बधित है।''01

प्रसिद्ध जर्मन शास्त्री ग्रियर्सन महोदय के अनुसार ''लोकगाथा लोक जीवन की अभिव्यक्ति है। किसी भी देश के समस्त निवासी (फोक) ही लोक गाथाओं की सामूहिक रचना करते है। आदिम अवस्था से ही प्रत्येक व्यक्ति सामूहिक रूप से नृत्य, संगीत, गीतों एवं लोक गाथाओं की रचना में लगे हुए है। ''02 इस आधार पर कह सकते है कि कथा की अपेक्षा लोक का हृदय गाथा में अधिक बसता है काल परिवेश आदि के अनुसार लोक जन'गाथा' में अपनी मनोभावना को जोड़ते रहते है।

अंग्रेजी में कथात्मक गीतों को बैलेड (Ballad) कहते है। बैलेड शब्द लेटिन भाषा के बेकारे शब्द से मिलता है। बेकारे का अर्थ है नृत्य करना फांसिस जेम्स चाईल्ड द्वारा संकलित (इंग्लिस एण्ड स्काटिस बैलेड्स) (1882, 1898) पुस्तक की लगभग तीन सौ से अधिक रचनाएँ इसी भाषा को पुष्टि करती है।

---

(1) डॉ. सिन्हा सत्यव्रत, भोजपुरी लोकगाथा, पृ.क्र. 2

(2) ग्रियसन जी.ए., पापुलर सांग, पृ.क्र. 98

भारत के विभिन्न प्रांतो में इसे विविध नामों से जाना जाता है। महाराष्ट्र में पवाड़ा, यहां शिवाजी ताना जी पवाड़े अधिक प्रसिद्ध हैं। बंगाल में राज गोपी चंद के गीत को गोपी चन्देर गीत कहा जाता है। पंजाब में हीर रांझा, सोनी महीवाल, भोजपुरी में कुंवरी सिंह लोरिकी, विजयमल तथा आल्हा इसी तरह छत्तीसगढ़ी में चनैनी, भरथरी, लोरो चंदा, पंडवानी, दशमत कैना आदि गाथाएं प्रसिद्व है (Popular Song) श्री जी.ए. ग्रियर्सन ने इस प्रकार के गीतों को ''पापुलर सांग कहा है।'' 03

<u>लोक गाथा की परिभाषा</u>– लोक गाथा का समझने के लिये लोक के विभिन्न अंगों को भी समझना निहायत जरूरी हो जाता है। लोक की जीवन–शैली संस्कृति, परिवेश अनुसार ही हम लोक की कला को जान समझ सकते है। इसी क्रम में लोक–गाथा को भी समझने के लिये उसके विविध अंगों का अध्ययन–विश्लेषण आवश्यक हो जाता है। लोक का क्षेत्र वृहद है तथा इसे किसी एक दायरे में सीमित करना दुष्कर है, फिर भी विद्वानों ने लोक को समझने–समझाने के लिये अपने विचार व्यक्त किये है। लोक गाथा की परिभाषा में विद्वानों ने अपना अलग–अलग मत व्यक्त किये हैं। ''श्री जी.एल किटरेज–ने कथात्मक गीत अथवा गीत कथा श्री फैक सिजविक ने लोक गाथा को सरल वर्णात्मक माना है। एफ. बी. एफ. गुनेर ने ऐसी कविता मानी है जो उद्भव की दृष्टि से सामुदायिक नत्य से संबंध हो, डा. गरे ने लोकगाथा को छोटे–छोटे पदों में रचित एक ऐसी प्राणमयी सरल कविता मानी है जिसमें काई लोकप्रिय कथा बहुत ही विशुद्ध रीति से की गयी हो। इ.बि. बैलेड पृष्ठ 993 इन्साइक्लोपीडिया ब्रिटैनिया में लोक गाथा की एक ऐसी शैली बताया गया है जिसके रचयिता अज्ञात हो जिसमें साधारण उपाख्यान का वर्णन हो।'' 04

इन्साइक्लोपीडिया अमेरिका का बैलेड पृष्ठ 945 लूसी पोड के अनुसार ''लोक गाथा साधारण कथात्मक गीत है जिसकी उत्पत्ति संदिग्ध होती है।'' 05 छत्तीसगढ़ी लोक गाथाओं में छत्तीसगढ़ी समाज का आदर्श चरित्र समावेशित है। ये चरित्र अल्प ज्ञात अथवा अज्ञात हो लेकिन छत्तीसगढ़ी लोक मानस को युगों से प्रेरणा देते रहे है। डॉ. रूद्रदत्त तिवारी के अनुसार ''छत्तीसगढ़ी लोक कहानियों में सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे

---

(3) ग्रियर्सन जी.ए., पापुलर सांग, पृ.क्र. 102

(4) डॉ. सिन्हा सत्यव्रत, भोजपुरी लोकगाथा, पृ.क्र. 15

(5) पौंड़ लूसी, इन्साइक्लोपीडिया अमेरिका का बैलेट, पृ.क्र. 995

सन्तु निरामयाः की भावना के पश्चात् स्वयं के सुखी होने का आदर्श भाव विद्यमान होता है।'' 06 डॉ. शकुन्तला शर्मा यहां के लोक कहानियों की विशेषताएं को रेखांकित करते हुए लिखती है कि ''ये लोक कहानियां प्रायः सुखान्त होती है क्योंकि भारतीय जीवन दर्शन में आशावादी है, आदर्शवादी है। इनके मूल में भारतीय आनंदवाद की कल्पना है फिर मानव की मूल प्रवृत्ति का ही सानिध्य सुख कामना से है।'' 07

छत्तीसगढ़ी लोक गाथाओं में छत्तीसगढ़ी लोक जीवन के यथार्थ को यहां के लोक गाथाकारों ने गीतों को माला में पिरोया है। जीवन के सुख दुख, करूणा, उत्साह, वीरता, हर्ष, विषाद सभी पक्षों को समाहित किया है। पीढ़ी दर पीढ़ी वंशानुगत प्राप्त छत्तीसगढ़ी लोक गाथा अलग–अलग क्षेत्रों में भिन्न–भिन्न रूपों में मिलती है। छत्तीसगढ़ की कुछ जनजातियाँ ऐसी भी थी जिन्हाने लोक गाथा को व्यवसाय रूप में स्वीकार किया था ये जनजातियाँ घूम–घूमकर लोक गाथा को सहज रूप में गाकर भिक्षार्जन के साथ–साथ अपनी आजीविका का निर्वाह भी करती थी। इन जनजातियों में देवार जाति जो राजाओं के काल से अपनी परम्परा को जीवित रखे हुए है, को कतिपय विद्वानों ने लोक गाथा संग्रह कर उन्हें प्रकाश में लाने का प्रशंसनीय कार्य भी किया है। विजय कुमार सिन्हा ने छत्तीसगढ़ के तीस से भी अधिक लोक गाथाओं के प्रचलित रूप की व्याख्या की है।

लोकगाथाओं की विशेषतायें

लोकगीत का एक प्रकार या भेद, ''लोकगाथा'' है, इसीलिये इन्हें कथा गीत, कथानक गीत, कहानी गीत आदि सम्बोधन भी प्राप्त है। उल्लेखनीय है छत्तीसगढ़ अंचल में अभी भी ''चंदैनी'' लोकगाथा को ''चंदैनी गीत'' कहा जाता है। इसी प्रकार ''बांस–गीत'' के नाम से अनेक लोकगाथायें गाई जाती है। बस्तर में केहनी–गीत अर्थात् कहानी–गीत

---

(6) डॉ. तिवारी रूद्रदत्त, बॉस गीतो का लोक तात्विक अध्ययन पृ.क्र. 39

(7) डॉ. शर्मा शकुन्तला, छत्तीसगढ़ी लोक जीवन और लोक साहित्य का अध्ययन, पृ.क्र. 246

संबोधन लोकगाथाओं के लिये प्रयुक्त होता है। उपर्युक्त सभी प्रयोग लोक द्वारा ही होते है।

यद्यपि ''लोकगाथा'' लोकगीत का एक प्रकार है, फिर भी इनमें कुछ अन्तर अवश्य है। लोकगाथा और लोकगीत में अंतर के संबंध में आगे चर्चा की जायेगी। अभी लोकगाथाओं की विशेषताओं पर प्रकाश डाला जायेगा। कुछ विशेषतायें तो लोक–गीत व लोकगाथाओं की एक सी है, और कुछ लोकगाथाओं की निजि विशेषतायें है।

रचयिता का नाम अज्ञात होना :–

लोकगीतों की तरह ही लोकगाथाओं का रचयिता अज्ञात होता है। 'लोकगाथा' की रचना तो निश्चित ही किसी–न–किसी व्यक्ति के द्वारा होती है, किन्तु रचयिता के व्यक्तित्व की कोई छाप उसमें नही होती है। 'लोक' लोकगाथाओं की रचना करके 'लोक' को ही सौंप देता है। यह कभी कोई दावा नही करता कि वह रचना उसकी है। उस लोकगाथा में फिर निरन्तर विकास होता रहता है। वह एक कंठ से दूसरे कंठ में विचरतो हुई फलती–फूलती रहती है। इसीलिये उसमें परिवर्धन व परिवर्तन होते रहते है। वर्तमान में लोकगीत या लोकगाथा के अज्ञात होने वाली बात को लेकर विद्वानों में मतभेद है।

कथात्मकता :–

लोकगीत व लोकगाथा में प्रमुख अन्तर यही है कि लोकगीतों में कथात्मकता नही होती, कथात्मकता होने पर वह लोकगाथा कहलाने लगते है। लोकगाथाओं का कथानक छोटा भी हो सकता है और वृहताकार भी।

लोकगाथा कथानक ऐतिहासिक, सामाजिक, धार्मिक, काल्पनिक व मनगढंत कुछ भी हो सकता है।

किसी महान चरित्र का यशोगान भी लोकगाथा की विषय–वस्तु हो सकती है। किसी महत्वपूर्ण घटनाओं से संबंधित कथायें भी लोकगाथाओं में निहित हो सकती है।

लोकगाथा गायक या रचयिता लोक गाथाओं की रचना को किसी कथानक को सुनकर करता है, तो कभी किंवदतियों व जन श्रुतियों के आधार पर। कभी किसी चरित्र विशेष से प्रभावित होकर रचना करता है तो कभी मनोरंजन की दृष्टि से मनगढंत किस्सों को लोकगाथा का रूप देता है।

गेयता :–

कथानक व गेयता ये दोनो लोकगाथा के महत्वपूर्ण अभिप्रायी तत्व है। इन दोनो के मेल में ही लोकगाथा जन्म लेती है। अतः ''गेयता'' लोकगाथा का अभिन्न अंग है। लोकगाथा का कभी तो छन्द के रूप में गायन होता है जिससे वह तालबद्व हो जाती है और कभी मुक्त छंद के रूप में गायन होता है, ऐसी लोकगाथाओं में केवल लयात्मकता रहती है, तालबद्धता नही। पहले लोकगाथाओं की सुनिश्चत धुनें हुआ करती थी किन्तु अब प्रायः परम्परागत धुने लुप्त होती जा रही है।

मौखिक परम्परा :–

''लोकगाथा'' सदा मौखिक परम्परा में जीवित रहती है। एक पीढ़ी, दूसरी पीढ़ी को, इसे सांस्कृतिक धरोहर के रूप में सौंपती चली आती है, इसलिये इसके कथानक व धुन में परिवर्तन व परिवर्धन होता रहता ह। आल्हा में पहले तैंतीस लड़ाइयों का वर्णन था, तैंतीस से बावन हुआ, फिर अन्ठावन। इस तरह विकास–प्रक्रिया में कथानक बढ़ता जाता है। मनगढ़ंत घटनाओं का समावेश गायक अपनी रूचि के अनुसार करता रहता है।

संदिग्ध ऐतिहासिकता :–

ऐतिहासिक लोकगाथाओं में वर्णित घटनायें व पात्र पूर्णतः इतिहास की कसौटी पर खरे नही उतरते है, अपवाद स्वरूप कुछ लोकगाथाओं में ऐतिहासिक तत्व प्रमाणिक सिद्व होते है, जैसः–

बुन्देलखण्ड का बुन्देला। इससे हरदौल से संबंधित अनेक घटनायें व पात्र ऐतिहासिक है।

क्षेत्रीय भाषा अथवा बोली :–

लोकगाथाओं की रचना किसी–न–किसी क्षेत्रीय बोली या भाषा में होती है। लोकगाथा मूलतः किसी भी प्रांत की हो, वहां से दूसरे प्रांतो में जाकर वे वहीं की बोली में गाई जाने लगती है।

सुमरनी :–

लोकगाथा–गायन में प्रायः गायक सुमरनी का गायन करता है। यह परम्परा वृहताकार लोक–गाथाओं में ही दिखाई देती है। लघु परिवेशीय लोकगाथाओं अथवा कथागीतों में सुमरनी गाने की परम्परा नही है।

अनेक लोकगाथायें ऐसी है, जिनमें परम्परागत् रूप से एक ही अवनद्य का प्रयोग होता है, उदाहरणार्थ – बुन्देलखण्ड में कारसदेव की गोट में केवल ''ढांक'' का प्रयोग होता है, ढोलामारू में केवल ढपला का

वर्तमान में लोकगाथा गायन में हारमोनियम, तबला व बेंजो का प्रयोग किया जाने लगा है हारमोनियम का प्रयोग प्रायः उन्हीं गाथाओं में होता है जिनमें तंतु वाद्यों का उपयोग नही होता। छत्तीसगढ़ में पहले पण्डवानी का गायन भी चिकारा पर होता था कालान्तर में हारमोनियम ने चिकारा का स्थान ले लिया। छत्तीसगढ़ मं बेंजो व तबला का प्रयोग लोक–गायन में बढ़ता दिखाई देता है।

अभिनय :–

अनेक लोकगाथायें ऐसी है, जिनमें गायक केवल गायन करता है किन्तु कुछ लोकगाथायें ऐसी है, जिनमें अभिनय भी समाहित रहता है, हालांकि इन लोकगाथा का गायन रूप अभी–अभी उभरा है, जिसका ज्वलंत उदाहरण छत्तीसगढ़ की पण्डवानी है। पद्मश्री तीजनबाई, पण्डवानी की शीर्षस्थ गायिका मानी जाती है, इनके कथा–गायन में अभिनय पक्ष प्रबल है। वैसे तो सभी पण्डवानी गायक कम–ज्यादा अभिनय करते हुये गायन

करते है। म.प्र. में छत्तीसगढ़ अंचल ऐसा अंचल है, जहां कि वर्तमान में गाई जाने वाली लोकगाथाओं में अभिनय महत्वपूर्ण है।

परिवर्तन व परिवर्धन :–

लोकगाथायें मौखिक या वाचिक परम्परा में जीवित रहती है, अतः परिवर्तन व परिवर्धन होत रहना सहज स्वाभाविक है, किन्तु यह परिवर्तन या परिवर्धन सप्रयास नही होना चाहिए। जब परिवर्तन व परिर्धन बुद्विजीवि वर्ग द्वारा किया जाने लगता है तो लोकगाथा अपनी मौलिकता खोने लगती है।

किसी लोक–गायक द्वारा गायी लोकगाथा का हम ध्वन्यांकन करे और यदि कोई शब्द बोच में समझ में न आये और हम पूछें तो लोक गायक दूसरा ही समानार्थी शब्द बना देते है और उसी कथानक को अलग ढंग से गा देते है। लोकरूचि को देखते हुये गायक अपने लोकगाथा गायन में परिवर्तन व परिवर्धन करता रहता है।

परम्परागत् धुन :–

एक समय अवश्य ऐसा था, जब 'आल्हा,' 'धर्मासांवरी,' 'ढोला' आदि अनेक लोकगाथाओं की सुनिश्चित धुने हुआ करती थी, किन्तु अब प्रायः नई–नई धुनें, गायक स्वयं बनाकर गायन करता है। परम्परागत् धुन अब लोकगाथा में प्रायः महत्वपूर्ण नही रह गई है। जितने पुराने अर्थात वयोवृद्ध गायन है, वे इस परम्परा का निर्वाह करते है, पर नये लोकगायक अब परम्परागत् गायन मे विश्वास नही रखते है। विशेष रूप से छत्तीसगढ़ अंचल में परम्परागत् धुनं विलुप्त होती जा रही है। लोक–गायक बड़े स्वाभिमान से कहते है, यह धुन हमने बनाई है। देवार गायक भी यही कहते है कि पुरानो धुन में गाना लोग पसंद नही करते है। अतः हम नई धुनें बनाते व गाते है। बसदेवा गायकों की धुनों में अभी बहुत कम परिवर्तन हुये है। उल्लेखनीय है कि स्त्रियां परम्परा प्रिय होती है अतः उनके कथा गायन (जो मंचीय नही है) की धुनों में प्रायः परिवर्तन नही हुआ है।

सह गायक व रागी :–

प्रायः लोकगाथा गायक अपने साथ सह गायक या रागी अवश्य रखते है। छत्तीसगढ़ में सह–गायक के रूप में रागी रहता है, किन्तु केवल गायन करना ही उसका काम नही है, वह एक श्रोता के रूप में हुंकार भी भरता है, कभी प्रश्न करता है, कभी व्यंग्य करता है, कभी गायन दोहराता है। पंडवानी में सह–गायक ''तोड़'' के आखिरी शब्द ओजपूर्ण स्वरों में दुहराता है, बीच–बीच में उत्साह बढ़ाने हेतु अरे वाह, अच्छा अरे अरे आदि शब्द भी रोचक ढंग से कहता है। बसदेवा गायकों का सहगायक वाद्य बजाता हुआ गायन दुहराता है। इस प्रकार प्रायः अनेक लोकगाथाओं में सह–गायक या रागी रहता है। अनक लोकगाथा गायन में रागी व सह–गायक की कोई भूमिका नही रहती है। लोकगाथाओं की अनेक विशेषतायें है किन्तु प्रमुख विशेषताओं पर ही प्रकाश डाला गया है।

छत्तीसगढ़ लोक गाथाएं

प्रेम गाथाएं		पौराणिक गाथाएं	वीर गाथाएं
स्त्री पात्र प्रधान	पुरूष प्रधान	1. फूलबासन	1. फूलकुंवर
लोक गाथाएं	लोक गाथाएं	2. सरवन	2. कल्याण सहाय
1. अहिमन रानी	1. ढोला मारू	3. पंडवानी	3. राजा वीर सिंह
2. रेवारानी	2. लोरिक चंदा (चनैनी)	4. देवीगाथा	4. रसालू
3. कंवलारानी		5. भरथरी	5. सीताराम नायक
4. रहिमतरानी			

छत्तीसगढ़ के ही डॉ. बलदाऊ प्रसाद निर्मलकर ने लोकगाथाओं को निम्न चार वर्गों में बांटा है :

''1. पुरूष प्रधान लोक गाथा 2. नारी प्रधान लोक गाथा 3. देवी गाथा 4. वीर गाथा।'' 8

उपर्युक्त वर्गीकरण को देखते हुए यह गौरव के साथ कहा जा सकता है

---

(8) डॉ. निर्मलकर बलदाऊ प्रसाद, महाभारत और छत्तीसगढ़ी लोकगाथा, पंडवानी का तुलनात्मक अध्ययन पृ.क्र. 39

कि छत्तीसगढ़ में सभी प्रकार की लोक गाथाएं है और उन्हें अपनी प्रस्तुति से जन जन के बीच प्रतिष्ठा दिलाने में अनेक समर्थ गायक और गायिकाओं ने यथेष्ठ योगदान दिए है। यह अलग बात है कि कुछ लोक गाथाएं अत्यधिक लोकप्रिय हुई है और उनकी प्रस्तुति को आम जीवन में इतनी सहजता से स्वीकार कर लिया गया है कि वर्तमान में कोई भी बाल या युवा कलाकार लोक गाथा गायन के लिए सामने आता है तो अत्यधिक प्रसिद्व लोक गाथा पंडवानी को सर्वाधिक महत्ता प्रदान की जाती है।
दूसरे क्रम में चनैनी गायन और तीसरे क्रम में भरथरी गायन का महत्ता प्रदान की जाती है। ढोला–मारू और लोरिक–चंदा की भी मंडलियाँ सुनी जाती है। अन्य गाथाओं को ग्रामीण क्षेत्रों में अवश्य सुना जाता है लेकिन शहरी मंचों में या शासकीय आयोजनों में अन्य गाथाएं अब तक या तो पहुची ही नही है और अगर पहुँची भी हो तो उन्हें वह मान्यता नही मिल पाई है कि वह उल्लेखनीय मानी जाएँ।

<u>लोक गाथा पंडवानी</u> – छत्तीसगढ़ में अनेकों लोकगाथाएं प्रचलित है लेकिन सर्वाधिक लोकप्रिय लोक गाथा ''पंडवानी'' ही है। हालांकि पंडवानी का संबंध महाभारत से है किन्तु स्थानीय परिवेश और स्थानीय लोक परम्पराओं के अनुरूप होने के कारण वह उतनी ही भिन्न भी है। पंडवानी की लोकप्रियता उसकी ऐतिहासिकता, अध्यात्म या दर्शन में नही है, बल्कि उसकी जन रंजकता में है। महाभारत की कथा तो ऐतिहासिक सत्य है। ''महाभारत को यदि हम इतिहास की जननी कहे, तो यह अतिश्योक्ति नही होगी। अनेक ऐतिहासिक विषयों की जन्मदात्री है महाभारत कथा, स्वयं भगवान वेद व्यास का मंतव्य है – ''महाभारत धर्मग्रंथ है, राजनीतिक दर्शन, निष्काम कर्मयोग दर्शन है, भक्ति शास्त्र है, अध्यात्म शास्त्र है, आर्य जाति का इतिहास है और सर्वार्थ साधक तथा सर्व शास्त्र संग्रह है और इन्ही गुणों के कारण महाभारत एक महाकाव्य है।'' 9 जबकि ''पंडवानी की ऐतिहासिकता का कोई पमाण नही है कि यह कब से गायी जा रही है।

---

(9) महाभारत आदि पर्व, नम्र निवेदन : पृ.क्र. 3

किन्तु महाभारत के पवित्र चरित्रों का गुणगान ही पंडवानी का मुख्य उद्देश्य है, इसी लक्ष्य को सम्मुख रखकर पंडवानी महाभारत के इतिहास को संजोती है। इसे पंडवानी गायक अपनी टूटी–फूटी भाषा में रूपांतरित कर दर्शकों के समक्ष प्रस्तुत करता है।

<u>नामकरण</u> :

महाभारत की गाथा का यह छत्तीसगढ़ी स्वरूप ''पंडवानी'' चूंकि पांडवों की पक्षधरता के लिए प्रसिद्ध है अतएव उसका पंडवानी नामकरण जायज प्रतीत होता है। मूलरूप में महाभारत को कथा में घोषित रूप में नायकत्व अर्जुन को प्राप्त है, हालांकि अर्जुन, धर्नुधारी अर्जुन की व्याप्ति महर्षि वेदव्यास कृत महाभारत में चतुर्दिक ह, हर घटना के मूल वह है। जिस प्रकार कर्ता हर जगह दिखलाई देता है लेकिन उसे ''कर्ता'' का दर्जा देने वाला, उसे सामर्थ्यवान बनाने वाला कोई न कोई होता है उसी प्रकार श्रीकृष्ण भी अर्जुन के आगे पीछे सर्वत्र व्याप्त है। अर्जुन के हर कार्य के पीछे श्रीकृष्ण की प्रेरणा है। इन दोनो के बिना 'महाभारत' ग्रन्थ अधूरा कहलाएगा। लेकिन पंडवानी में नायकत्व ''भीम'' को प्रदान किया गया है। भीम ने संपूर्ण 'पंडवानी' गायन में अपने नायकत्व को सिद्व भी किया है। अर्जुन के ऊपर श्रीकृष्ण का साया वाली कोई बात पंडवानी में भीम के साथ नही है। वह अपने बल, पौरूष, पराक्रम और सटीक, समयोचित निर्णय के कारण ''पंडवानी'' गायक–गायिकाओं का सर्वाधिक प्रिय नायक है।

''पांडव महाराज पांडु के पांचों पुत्रों को कहा जाता था। युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव सहित पांचो भाईयों की गणना पांडव के रूप में और दुर्योधन से लेकर युयुत्सु तक एक सौ भाई ''कौरव'' कहे जाते थे। दो सगे भाइयों पांडु और धृतराष्ट्र की संताने इस भांति क्रमशः ''पांडव'' और ''कौरव'' कहलाई।

चूंकि पांडव भाई सत्य की राह पर थे, धर्म–कर्म पर आस्था रखते थे, किसी का हक मारने के खिलाप थे। दुराचरण, भद्रचरण, दुराव, किसी को पीड़ा पहुंचाना आदि दुगुर्णो से बचे रहते थे अतएव उनके प्रति

बड़े बुजुर्गो में यथा भीष्म पितामह, गुरू द्रोणाचार्य, गुरू शुक्राचार्य, महात्मा विदुर आदि के मन में अपनत्व की, स्नेह–प्यार ममता की भावना थी। चूंकि महाराज पांडु के निधन के बाद राजगद्दी पर जन्मांध धृतराष्ट्र बैठे थे अतएव राज्याश्रित होने के नाते भीष्म पितामह, गुरू द्रोणाचार्य और गुरू कृपाचार्य आदि परिवार संबंधी लिए जाने वाले उनके निर्णयों पर खुलकर विरोध नहीं कर पाते थे और न चाहते हुए भी राजाज्ञा का पालन करने को बाध्य थे अतएव दुष्ट दुर्योधन अपनी कपटवृत्ति और दुराचरण के जरिए युधिष्ठिर सहित पांचो पांडव का अहित करने के लिए सदैव लालायित रहता था। बाल्यकाल से ही कौरव पांडव दो दल जो एक दूसरे को बर्दाश्त नही कर पाते, की तरह एक परिवार के होते हुए भी नदी के दो पाट की तरह एक दूसरे से दूर होते गए। पांडवो से हमेशा चिढ़ते रहने, जलते रहने और उनका अहित करने की सोचते रहने वाले कौरवों को ''पंडवानी'' में छत्तीसगढ़ी गायक–गायिकाओं ने खल नायकत्व प्रदान किया है। दुष्ट, दुराचारी, अधर्मी, गलत रास्ते पर चलने वाले, ईष्यालु, दगाबाज आदि चित्रित करते हुए उनकी निंदा पंडवानी गायक–गायिका करते है। पांडवों की प्रशंसा करने में और कौरवों की निंदा करने में पंडवानी कलाकार अघाते नही। इसी के कारण उन्होने 'महाभारत' की कथा के दो दलो को, प्रतिद्वंदी भाइयों का एक दृष्टि से नही देखा। पांडवो के प्रति स्नेह, प्यार, अपनत्व दिखलाया और कौरवो के प्रति द्वेष, घृणा और परायापन दिखलाकर उनका तिरस्कार किया है। पांडवो की वाणी के वे पक्षधर है। पांडव वाणी का प्रचार करना अपना कर्त्तव्य मानते है अतएव उन्होने ''पांडव'' के साथ ''वानी'' को जोड़कर पंडवानी बना दिया। हर दृष्टि से पांडवो में वजनदार दिखने व लगने वाले भीमसेन को नायकत्व प्रदान करने में भी पंडवानी प्रस्तोता पीछे नही रहे। भीमसेन ने ही द्रोपदी के साथ हुए अनाचार, अत्याचार और नारी अपमान का बदला लेने के लिए दुर्योधन और दुःशासन को अपनी गदा से परधाम पहुंचाया। भीमसेन के प्रति शेष चारो भाइयों और माता कुन्ती के स्नेह प्रेम और श्रद्धा भावना की अभिव्यक्ति छत्तीसगढ़ी लोकगाथा पंडवानी में होती है।

पंडवानीः— उद्‌भव और विकास

छत्तीसगढ़ अंचल की अपनी विशिष्टता है पंडवानी गायन की शैली। जिस प्रकार एक मुख्य कलाकार अपने सहयोगी गायक कलाकार ''रागी'' के साथ मिलकर अपने तंबूरे, हारमोनियम, बेन्जो, तबला और ढोलक वादक के साथ महाभारत की कथा को छत्तीसगढ़ी परिवेश, भाषा, धुन, और छत्तीसगढ़ीपन से सराबोर कर गाथा को प्रस्तुत करता है पूरी दुनियां में इनकी प्रस्तुति विशिष्टता कायम करती है। न यह किसी की नकल है और न कोई अब तक इसकी नकल करके प्रसिद्वि अर्जित कर सका है।

पंडवानी गायन की परम्परा के सन्दर्भ में विभिन्न विद्वानों में मतभेद है। श्री नंदकिशोर तिवारी, नवलकिशोर शुक्ल, डॉ. विनय कुमार पाठक, बाबूलाल शुक्ल, डॉ. बलदाऊ प्रसाद निर्मलकर, पुनाराम साहू ''राज'' पवन कुमार सिंह, राजीव सक्सेना, डॉ. विजय कुमार सिन्हा, डॉ. विमल कुमार पाठक आदि विद्वानो में एक मत इस अनुसार नही है कि पंडवानी गायन की शुरूआत कब से हुई? कुछेक विद्वान इसकी शुरूआत सैकड़ों वर्षों से मानते है तो कुछेक बीसवीं शताब्दी के शुरूआती दौर को मानते है।

प्राचीन मानने वालों ने इसका पमाण देते हुए कहा है कि लगभग पांच हजार वर्ष पूर्व छत्तीसगढ़ में हैहयवंशी राजा राज्य करते थे। इसी वंश में कीर्तिवीर्य या सहस्त्रबाहु हुए जिन्हे चेदिराज कहा जाता है महाभारत के 18 प्रधान राजाओं में चेदिराज के नाम का उल्लेख मिलता है। इसके विपरीत कुछेक इतिहासकार मानते है कि पांचवीं सदी में छत्तीसगढ़ में पांडव वंशीय राजा राज्य करते थे किन्तु यह महाभारतकालीन पांडव वंश नही है। रायपुर और बिलासपुर में इस वंश के बहुत से ताम्रपत्र और लेख मिले है। सबसे प्राचीन ''बहुमनी'' ग्राम का ताम्रपत्र है जिससे वाकाटकों से पांडवो के संबंध का पता लगता है।

श्री नंदकिशोर तिवारी ने अपना अभिमत इस तरह व्यक्त किया है ''लोक विश्वास का दूसरा भी एक रूप है। मोरध्वज की कथा को

रतनपुर (बिलासपुर) से जोड़ा जाता है। रतनपुर में कृष्णार्जुनी तालाब है। कहा जाता है कि कृष्ण और अर्जुन ने इस अंचल की यात्रा की थी उन्ही की स्मृति में यह तालाब खुदवाया गया है। आज भी पौष पूर्णिमा के दिन यहां मेला भरता है। हजारों लोग इस पवित्र तालाब में स्नान कर अपना जन्म धन्य करते है।'' 10

छत्तीसगढ़ की अनुसूचित जनजातियों में पंडों और कंवर जनजातियां भी पाई जातो है, कहते है कि लोग अपना संबंध पांडवो और कौरवो से मानते है।

यह भी कहा जाता है कि पांडवो और कौरवों को अपना पुरखा मानने वाले ये वंशज अभी भी एक दूसरे से बातचीत का भी संबंध नही रखते, एक दूसरे को पुश्तैनी दुश्मन मानते है।

छत्तीसगढ़ में पहले मूलरूप से अनुसूचित जनजाति के लोग ही निवास करते थे। अन्य सभी जातियों के लोग तो कालांतर में रोजी रोटी की तलाश में आते रहे या लाये गए है। पूजा पाठ, अध्यापन के लिए ब्राम्हण, राजकाज की व्यवस्था, सुरक्षा, कानून व्यवस्था के लिए क्षत्रिय, आम लोगों को दैनिक जीवन की व कृषि हेतु विभिन्न वस्तुओं की समुचित व्यवस्था हेतु वैश्य और विभिन्न वस्तुओं के उत्पादन व निर्माण के लिए शूद्र जाति के विभिन्न लोग यहां आवश्यकतानुसार आदिवासी–गोंड़ महाराजाआं, राजाओं, जमीदारों के द्वारा लाये जाते रहे। स्वाभाविक है कि विभिन्न वर्ण के लोगों ने मिलकर मनोरंजन की जो अनेक विधाएं स्वीकारी उनमें पंडवानी गायन की विधा भी एक रही हो।

<u>विशेषताए</u> – छत्तीसगढ़ में पंडवानी की गायन शैली अपने चरमोत्कर्ष पर है। यह अपनी विशिष्टताओं के कारण अन्तर्राष्ट्रीय क्षितिज में पहुॅचकर लोकप्रिय हुई। वतमान स्वरूप प्राचीन परम्परा का प्रतिफल है। पंडवानी छत्तीसगढ़ की सांस्कृतिक धरोहर है। पंडवानी वेद व्यास रचित महाभारत

---

(10) तिवारी नन्द किशोर, पंडवानी मेला स्मारिका, पृ.क्र. 21

का लोक रूप और छत्तीसगढ़ का लोक महाकाव्य भी है। आज पंडवानी गाथा कथा के लोक गायन ने लोक मानस को जितना प्रभावित किया है उतना अन्य लोक गाथा नही। शायद यही कारण है कि पंडवानी के श्रोताओं की संख्या में वृद्धि के साथ–साथ पंडवानी गायक/गायिकाओं की संख्या में भी आशातीत बढ़ोत्तरी हुई है। पंडवानी का वैशिष्ट्य ही इसकी लोक प्रियता का कारण है। इन विशेषताओं को निम्न बिन्दुओं पर समाविष्ट किया जा सकता है –

(1) पृथकता – महामुनि व्यास द्वारा महाभारत की रचना की गई, जो शुद्ध संस्कृत श्लोकों में है। जिसे विद्वजनों ने पाँचवे वेद की संज्ञा दी है। महाभारत अनेक कथाओं का संग्रह ह। इसमें कथाओं की भी उप कथाएँ है। जो सम्पूर्ण भारत में प्रसिद्ध है। भारतीय जन–मानस इन कथाओं और उप कथाओं से भली–भाँति परिचित है। ''सम्पूर्ण महाभारत की कथा एक सूत्र में पिरोयी गई छोटी–छोटी लोक कथाओं का अद्भुत संग्रह है। सम्भवतः यही कारण है कि समूचे हिन्दुस्तान में महाभारत की कथा स्थानीय लोक विश्वास के साथ आज भी जीवित है। अंचल विशेष की लोक मान्यताओं, भू–गोल, इतिहास तथा आर्थिकी से प्रभावित होकर उस अंचल विशेष की दैनंदिनी की रूढ़ियों को आत्मसात कर महाभारत की कथाएँ स्थानीय हा गई है। उसकी यही स्थानीयता ही उसकी रमणीयता है।'' 11

हालांकि छत्तीसगढ़ी पंडवानी कथा गायन की परम्परा महाभारत की कथाओं पर आधारित है, फिर भी यह अपने स्थानीय लोक रंग के कारण अपनी विशिष्टता कायम रखती है।

(2) विशालता (प्रलंब कथानक) – छत्तीसगढ़ में अनेकों गाथाओं की परम्परा है। जैसे–पंडवानी, (पांडवों की कथाएं) श्रवण कुमार की कथा, लोरिक चंदा, भरथरी चरित्र आदि। प्रथम दोनो लोक गाथाएँ पौराणिक है

---

(11) तिवारी नन्द किशोर, पंडवानी, चौमासा अंक 4, पृ.क्र. 33

किन्तु ये दोनो कथाएँ आध्यात्मिक होकर भी लोक तत्व से सम्मिश्रित है भिन्न है। श्रवण कुमार की कथा से पितृभक्ति की प्रेरणा मिलती है। जबकि पंडवानी लोक रंजन के लिए गाई जाती है। लोरिक चंदा और भरथरी चरित्र तंत्र–मंत्र और नाथ सम्प्रदाय से प्रभावित है। पंडवानी कथा गायन में कथा 18 दिनों में भी पूरी नही होती, जबकि अन्य लोक गाथाएँ ढ़ोला मारू, गुंजपड़की, दसमत केना, चंदैनी आदि कम समय में पूरी कर ली जाती है। पंडवानी विस्तृत और विशाल है, अन्य लोक गाथाएँ सक्षिप्त। श्रवण कुमार, लोरिक चंदा और भरथरी में अन्य कथाएँ नही है।

जबकि पंडवानी छोटी–छोटी कथाओं का अद्‌भुत संग्रह है। और इसमें सैकड़ों अन्य कथाएँ भी विद्यमान है। अतः विशालता की दृष्टि से पंडवानी एक अकेली लोक गाथा है, जो पौराणिक होकर भी लोक गाथा के रूप में प्रचलित है। जिसका आनंद सुनने में ही है पढ़ने में नही।

(3) <u>टेक पदों की पुनरावृत्ति</u> – लोक गाथाओं की एक प्रमुख विशेषता है प्रलंब कथानक। लम्बे कथानक के कारण कथा गायक टेक पदों की पुनरावृत्ति करता है। छत्तीसगढ़ में अन्य लोक गाथाओं के तरह ही पंडवानी में भी टेक पदों की पुनरावृत्ति की जाती है। पंडवानी कथा गायन में टेक पदों को सुनकर ही इसके स्वर, लय और ताल से पंडवानी का पूर्वाभास मिल जाता है। पंडवानी गायक ''रामे रामे भईया मोर रामे रामे जी'' या ''सना ननना ननना मोहन'' आदि टेक पदों से अपना गायन प्रारंभ करता है, और सम्पूर्ण कथा गायन में इन पदों की शताधिक बार पुनरावृत्ति होती दिखाई पड़ती है। प्रस्तुत है उदाहरण –

रामे रामे भईया रामे ग रामे भईया
रामे रामे भईया रामे ग रामे भईया।

(4) लोक महाकाव्यत्व – काव्य भेद के अन्तर्गत प्रबंध काव्य के दो भेद बताये गये है (1) महाकाव्य (2) खण्ड काव्य। महाभारत एक महाकाव्य है जिसमें महाकाव्य की सभी विशेषताएँ पाई जाती है चूंकि पंडवानी महाभारत का लोक और मौखिक रूप है। अतः कुछ विशेषताओं को छोड़कर महाकाव्य की सारी विशेषताएँ पंडवानी में पाई जाती है और यही

विशेषताएँ पंडवानी का लोक महाकाव्यत्व है। ''रामायण और महाभारत दो ऐसे अन्यतम महाकाव्य है जिनमें सम्पूर्ण भारतीय जीवन परिलक्षित हुआ है। हमारे और आपके जीवन में भी इन महाकाव्यों का प्रभाव स्पष्ट है।'' 12 पंडवानी छत्तीसगढ़ में गाई जाती है अतः इसमें छत्तीसगढ़ी लोक जीवन का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है। पंडवानी महाभारत के समानांतर लोक महाकाव्य है जिसका नायक भीम है जो पराक्रमी और क्षत्रीय है। जिसमें उनके जीवन के सम्पूर्ण पक्ष समाहित है। महाभारत की तरह पंडवानी की कथाएँ विभिन्न पर्वों में गाई जाती है।

(5) <u>चम्पू शैली का लोक महाकाव्य</u> – काव्य भेद के अंतर्गत चम्पू महाकाव्य का उल्लेख मिलता है – ''गद्य पद्य मयं काव्यं चम्पूरित्यमि धीयते।'' अर्थात गद्य पद्य मय काव्य चम्पू काव्य कहलाता है। महाभारत एक लिखित महाकाव्य है, पंडवानी इसका छत्तीसगढ़ी रूतांतरण, किन्तु पंडवानी कथा गायन में गद्य एवं पद्य दोनो ही समान रूप में प्रयुक्त होते है। इस दृष्टि से पंडवानी उत्कृष्ट कोटि का चम्पू शैली का महाकाव्य है, जिसमें लोक की अभिव्यक्ति है –

अगा छाती लगा के भेंटन लागे भाई
अगा दल में जावन लागे मोर भाई

बड़े प्रेम के साथ मिलिन है। राज शैल कथे– दुर्योधन पर एक बात रिहिसे। तेरा साल होगे ह पांडव मन जब ले बनवास गे हे –

(9) <u>मौखिक परम्परा</u> – पंडवानी की गायन परम्परा का प्रारंभ मौखिक रूप, वाणी आदान–प्रदान द्वारा ही हुई है। पंडवानी का कोई लिखित साहित्य नही है। ''मौखिक परम्परा से हम अपरिचित नही है। भारतीय साहित्य का एक वृहद अंश लिपिबद्ध होने क पूर्व मौखिक परम्परा में सुरक्षित था पुराणकालिन शिक्षा पद्धति में मौखिक शिक्षा बहुत महत्वपूर्ण थी। गुरूजनों से शिष्यों में होता हुआ प्राचीन साहित्य एक अक्षुण्य मौखिक

---

(12) डॉ. सिन्हा सत्यव्रत, भोजपुरी लोकगाथा, पृ.क्र. 18

परम्परा में सुरक्षित रहा है। लोक साहित्य तो सदैव मौखिक परम्परा का साहित्य रहा है। समाज का हृदय और समाज की वाणी ही इसका आवास है।'' 13 पंडवानी की अजस धारा मौखिक परम्परा के माध्यम से आज तक निरन्तर प्रवाहित हो रही है। ''लोक वाड्मय लोकमानस की सर्जना का परिणाम है और लोक साहित्य उसकी का अंग एवं अभिव्यक्ति है। इसमें मानवता के विकास की उस मंजिल की संस्कृति निहित और सुरक्षित है, जबकि अभी लेखन पद्धति का प्रादुर्भाव नहीं हुआ था।'' 14

वर्तमान में श्री सबल सिंह चौहान कृत महाभारत को आधार ग्रंथ के रूप में पंडवानी गायकों द्वारा व्यवहृत किया जाता है, किन्तु कथाएँ अपने स्थानीय परिवेश और लोक विश्वासों के रूप में ढलकर मौखिक परम्परा की रक्षा करती है।

(10) <u>अलंकारिकता का अभाव</u> – पंडवानी गांवो की सांस्कृतिक उर्वरता का प्रतिफल है। ग्राम गीत और महाकवियों की कविता में अंतर है। ग्राम गीत हृदय का धन है और महाकाव्य मस्तिष्क का। ग्राम गीत में रस है, महाकाव्य में अलंकार। रस स्वाभाविक है और अलंकार मानव निर्मित ..... ग्राम गीत प्रकृति के उद्गार है इनमें अलंकार नही केवल रस है, छन्द नही केवल लय है, लालित्य नही केवल माधुर्य है।

पंडित राम नरेश त्रिपाठी का उक्त कथन पंडवानी पर पूर्णतया प्रतिफलित होता है। चूंकि पंडवानी सम्पूर्ण समाज की सामूहिक अनुभूतियॉ की अभिव्यक्ति है, किसी व्यक्ति विशेष की नही। अतः पंडवानी में अलंकारिकता का अभाव है, केवल रस और माधुर्य है।

(11) <u>संगीत, लय और अभिनय का अनूठा सामंजस्य</u> – ''लोक गाथाओं में संगीत अनिवार्य रूप से रहता है। बिना संगीत के माध्यम से लोक गाथाओं के महत्व को हम नही समझ सकते है। लोक गाथाओं में

---

(13) डॉ. सिन्हा सत्यव्रत, भोजपुरी लोकगाथा, पृ.क्र. 11

(14) डॉ. शुक्ल नारायण केशरी, आयाम ''सापेक्ष'' लोक संस्कृति, पृ.क्र. 172

साहित्य का अभाव रहता है, उनमें सूक्ष्म भावों की अभिव्यंजना नही पाई जाती, अतएव संगीत ही लोक गाथाओं को भावपूर्ण एवं सुमधुर बनाती है।'' 15 पंडवानी में संगीत तो है इसमें नृत्य और अभिनय भी है। गायक नृत्य और आंगिक चेष्टाओं के द्वारा पात्रों के चरित्र को अभिव्यक्त करता है। गायक अपनी मुख–मुद्रा व अभिनय के द्वारा द्रोपती की दीनता, करूणा, दुर्योधन–दुशासन को दुष्टता एवं क्रूरता, शकुनि की कुटिलता तथा भीम का रौद्र रूप सबको प्रकट कर देता है। पंडवानी एक पात्रीय अभिनय कला है, जिसमें गायक पंडवानी के समस्त पात्रों को मंच पर एक साथ जीता है –

दुख हरो द्वारकानाथ सरन मै तेरी
बिन काज आज महराज लाज गई मेरी
दुख हरो द्वारकानाथ सरन मै तेरी।

(12) <u>उपदेशात्मक और लोक रंजन</u> – ''लोक गाथाओं का क्रमबद्ध वर्णन करना लोक गाथाकार का मुख्य कार्य होता है। वह अपनी ओर से श्रोताओं का शिक्षा या उपदेश नही देता। बल्कि शिक्षा और उपदेश ग्रहण करने का उत्तरदायित्व श्रोता पर ही होता है।'' 16 गाथा गायक अपने गायन में लोक जीवन का सांगोपांग वर्णन करता है। इस तारतम्य में लोक जीवन के गुण–दोष सहज रूप से आ जाते है। जो श्रोताओं के अंतर्मन में गहरी छवि बनाता है। पंडवानी गायक कथा गायन के द्वारा गुण दोषों पर प्रकाश डालता है और दोनो को त्याग कर गुणों को ग्रहण करने अप्रत्यक्ष रूप से आग्रह करता है। पंडवानी गायक कथा गायन के द्वारा गुण दोषो पर प्रकाश डालता ह और दोनो को त्याग कर गुणों को ग्रहण करने अप्रत्यक्ष रूप से आग्रह करता है। पंडवानी में धर्म, नीति, भातृप्रेम, मित्रता,

---

(15) डॉ. सिन्हा सत्यव्रत, भोजपुरी लोकगाथा, पृ.क्र. 28–29

(16) डॉ. सिन्हा सत्यव्रत, भोजपुरी लोकगाथा, पृ.क्र. 33

सेवा, सहायोग, सहिष्णुता, वचन पालन आदि भावनाएं भरी हुई है। यही प्रवृत्ति पंडवानी की उपदेशात्मकता है।

पंडवानी में उपदेश के साथ–साथ स्वस्थ मनोरंजन का भी खजाना है। विभिन्न प्रसंगों में रागी तत्कालिन परिस्थितियों को समकालीन परिस्थितियों से जोड़कर एक तरह से विदुषक (जोकर) का कार्य करता है। पंडवानी गायक भी हँसी मजाक का वातावरण उत्पन्न कर श्रोताओं का मनोरंजन करता है। भीम का पराक्रम, उसकी उटपुटांग हरकत श्रोताओं को गुदगुदाती है– कीचक कथे अइसन सेवा करइया नई पाय रेहेव मोर सात झन नारी रिहिस फेर अइसन सेवा नई करे रिहिन सालिन्द्री। सालिन्द्री कहिके एक ठन हाथ ल नई चपके रिहिस तेन ल उठइस ममा। रब ले ओखर हाथेच धरा गे भीमसेन के नारी। जब भीमसेन के नारी ल पकड़ीस तब भीमसेन के हाथ–गोड़ रेच्चड़हा लगिस। राजा कीचक कथे नारी मन के हाथ पैर तो मुलायम होथे। ये सालिन्द्री ये त सालेन्द्रा ये रे। गायक के उपरोक्त कथन से श्रोता समुदाय खिल–खिलाकर हँसते–हँसते लोटपोट हो जाता है।

पंडवानी छत्तीसगढ़ की प्रधान लोक गाथा है और इसमें लोक गाथा का सारा वैशिष्ट्य समाहित है। इसकी लोकप्रियता ही इसके वैशिष्ट्य का ठास प्रमाण है।

———000———

अध्याय – 2

लोकगाथा पंडवानी :– शिल्प और स्वरूप

1 प्रस्तुति शैली

2 लोक संगीत/वाद्य

3 वेशभूषा/रूप सज्जा

4 मंच

प्रस्तुति शैली

पंडवानी की प्रस्तुति के लिए किसी विशेष पर्व त्यौहार या अवसर की अनिवार्यता नही है, एक रात से लेकर कई रातों तक चलने वाली पंडवानी बैठकर भी गाई जाती है और खड़े होकर भी तथा घुटनों का सहारा लेकर भी। यह एक ऐसा मोनो प्ले है, जिसमें अंग संचालन, भावाभिव्यक्ति, स्वरों के तीव्र आरोह–अवरोह के साथ–साथ संगीत की जुगलबंदिया श्रोताओं को सम्मोहन पाश में बांधे रखती है। तम्बूरा पंडवानी का अभिन्न संगी और सहचर है। इसकी मंचीय प्रस्तुति के साथ बैठे हुए हुंकार देने वाले रागी की भूमिका कथा को लयात्मक गतिशीलता देने और रोचकता को बराबर बनाए रखने में महत्वपूर्ण है। अपने हुंकार द्वारा और बीच–बीच में रोचक प्रश्नों के द्वारा कथा को दो स्तरों पर विभाजित करता हुआ रागी समकालीन व्याख्या के लिए पृष्ठभूमि तैयार करने में दक्ष होता है।

श्री रामहृदय तिवारी ने पद्मश्री तीजनबाई से साक्षात्कार लेकर पंडवानी गायन की शैली के बारे में कहा ''कापालिक शैली के गायन में हंव। कापालिक शैली कल्पनाए। कइसे द्रोपदी गिस। कइसे बरमाला डारिस। कइसे द्रोपदी चिल्लाइस चीखिस येला चलके, चिल्ला के, रेंग के बताये जाथे। जोन चीज के कल्पना वो करे हे, वो कल्पना ल में ह मतलब सोचके, विचार के अइसने द्रोपदी ह चिल्लाइस होही, अइसने कौरव मन हा दहाड़ के बोलीन होहीं, अइसने ओकर आवाज ल सुनके भीमसेन ये परकार ले गरजीस होही, ये सोचके मैं गरज के बताथों।'' 01

इस आधार पर पंडवानी शैली को कथाओं मे विभाजित किया जा सकता है, पंडवानी गायन की निम्नलिखित दो शैलीयाँ प्रचलित है–

(1) कापालिक

(2) वेदमती

---

(1) श्री तिवारी रामहृदय – पंडवानीः लोकतत्व की त्रिवेणी

कापालिक शैली :–

वे कथाएँ जो कल्पित होकर भी स्थानीय विश्वासों के अनुरूप पॉडवों से संबंधित है, यही पंडवानी की कापालिक शैली है। इन कथाओं के लिए यह आवश्यकता नही कि इसका संबंध महाभारत से हो।लोक विश्वासों के रंग में रंगी ये कथाएँ जन रंजन का साधन है, और यह गायन परम्परा केवल छत्तीसगढ़ में मिलती है। कापालिक शैली जनश्रुतियों और वाचिक परम्परा पर आधारित है। नंद किशोर तिवारी का कथन है ''तमाम ऐतिहासिक उपलब्ध अभिलेखों से इतर छत्तीसगढ़ के पंडवानी गायकों के पांडवों को ढूँढ पाना अत्यंत कठिन है। कुछ एक गायक महाभारत की कथा को आधार बनाकर पंडवानी का गायन करते है, तो कुछ महाभारत की मूल कथाओं से सरोकार नही रखते। यदि सरोकार है तो लोक विश्वासों से जिसे व एक लंबे समय से जी रहे है।'' 02

कापालिक गायकों की कथा पांडवों से संबंधित होती है किन्तु पंडवानी का नायक भीम होता है। कापालिक पंडवानी छत्तीसगढ़ का महाभारत है। दयाशंकर शुक्ल का कथन है ''इस कथा में महाभारत के पात्र ऐतिहासिक प्रतीक होते है। पर अनेक घटनाएँ इतिहास में वर्णित नही है। सम्भवतः इनमें प्रभावोत्पादकता की दृष्टि से ही पात्रों को ऐतिहासिक रूप दे दिया गया है।'' 03

महाभारत के नायक श्रीकृष्ण है, किन्तु छत्तीसगढ़ में प्रचलित पंडवानी का नायक भीम है। भीम को इस अंचल में 'भीमसन' कहकर सम्बोधित किया जाता है। (भीमसन कस दिखत हे टूरा ह रे) भीमसन शब्द से ही विराटकाय बलशाली, पराक्रमी पुरूष का आभास मिलता है। उसकी युद्ध कला के वर्णन से श्रोताओं का मनोरंजन होता है। लोग भीमसन का

---

(2) तिवारी, किशोर नंद, पंडवानी, चौमासा अंक; 4 पृष्ठ क्र. 35

(3) शुक्ल, दयाशंकर, छ.ग. लोक साहित्य का अध्ययन, पृष्ठ क्र. 240

प्रसंग सुनकर आनंद विभोर हो जाते है। कापालिक शैली की पंडवानी में किसी भी कथा का मूल महाभारत की कथा से जुड़ना आवश्यक नही ह। महाभारत के पात्र केवल मिथकीय रूप में जुड़े होते है। कापालिक गायक स्थानीय लोक विश्वासों, घटनाओं आदि को आधार बनाकर पंडवानी की संरचना करता है। कथा पूरी तरह उनके दिमाग की ऊपज होती है।

वेदमती शैली :–

वे कथाएँ जो शास्त्र सम्मत है, मूल महाभारत के आधार पर पंडवानी के अर्न्तगत गाई जाती है। इन कथाओं की गायन परम्परा ही वेदमती शैली है। इसका गायन बैठकर और खड़े होकर दोनो ही तरह से किया जाता है। वेदमती शाखा की कथाएँ मूल महाभारत से साम्य रखती है, किन्तु पंडवानी गायन मे वे वेदमती शाखा के गायक श्री सबल सिंह चौहान कृत महाभारत का अनुसरण करते है। इस शाखा के अर्न्तगत आदि परब सभा परब, बन परब, उद्योग परब, भीष्म परब, द्रोण परब, कर्ण परब, शैल्य परब, गदा परब, अश्वमेघ परब, स्र्वगारोहरण परब, मूसल परब आदि छत्तीसगढ़ी रूपों में समाहित है। वेदमती शाखा के गायक/ गायिकाओं का यह अभिमत है कि शांति परब के गायन से गायक शांति अर्थात् मृत्यु को प्राप्त करता है। अतः शांति परब का गायन नही करते। यह लोक विश्वास पर आस्था का प्रमाण है, जिसे अंध विश्वास भी कहा जा सकता है, किन्तु नइ पीढ़ी के पंडवानी गायक श्री प्रहलाद निषाद (सिंघनगढ़) इस अभिमत अंध विश्वास के विरोधी है। उनका स्पष्ट शब्दों में यह कथन है कि ऐसा कुछ नही है। मै शांति परब की कथा का गायन करता हूँ यह बात और है कि शांति परब की कथा अन्य परबों को कथा की तरह रोचक नही होती।

वेदमती शैली के उत्कृष्ट कलाकारों में सबसे पहले झाडूराम देवांगन का नाम लिया जाता है। इस शाखा के अन्य कलाकार श्री पूनाराम

निषाद श्रीमती लक्ष्मीबाई बन्जारे, श्री रेवाराम साहू, श्री चेतन देवांगन, श्रीमति प्रभा यादव, कु. ऋतु वर्मा आदि है।

यह स्पष्ट हो चुका है कि पंडवानी गायन की दो शैलियां है, जिनमे से एक है, वेदमति शैली और दूसरी है कापालिक शैली। इस संदर्भ में श्री राम हृदय तिवारी का कथन है ''अभिव्यक्ति शैली की दृष्टि से पंडवानी की दो चर्चित शाखाएँ है एक है कापालिक और दूसरी है, वेदमति शाखा। आज पंडवानी के जिस स्वरूप से हम सब परिचित है, वह है कापालिक शाखा जिसका अभ्युदय वेदमती शाखा के पारंपरिक गायन के परिष्कार स्वरूप हुआ। कापालिक शाखा महाभारत की कथा को एक नए लोकरंग का परिधान देकर इन्द्रधनुषी मोहकता के साथ हमारे सामने लाती है, इसमें समयानुकूल लोकरूचि के वाद्यों का इस्तेमाल और गायन की नइ आक्रामक शैली का आविष्कार है। मूल कथा के साथ अंचल के प्रचलित लोकधुनों का संगुफन है। इसी शाखा के साथ प्रसंगानुकूल एकल भावाभिनय की शुरूआत हुई जिसका चरम उत्कर्ष आज की विश्व विख्यात पंडवानी गायिका पद्मश्री तीजनबाई में देखा जा सकता है।'' 04

कापालिक शैली के उत्कृष्ट कलाकारों में पद्मश्री तीजनबाई, श्रीमति शांतिबाई चेलक, उषाबाई बारले, मीनाबाई साहू, चैतीबाई, रंभाबाई, सुशीला ठाकुर, प्रतिभा बाई, चमेली निषाद, सामेशास्त्री देवी, प्रतिभा बाई गायकवाड़ आदि है।

इस प्रकार पंडवानी की दो प्रमुख शैलियॉ ह, वेदमती और कपालिक। इन दोनो शैलियों के बीच का अन्तर हम लोक कलाकारों की प्रस्तुति में देख सकते है।

---

(4) श्री तिवारी रामहृदय – पंडवानीः लोकतत्व की त्रिवेणी पृष्ठ क्र. 21

संगीत

संगीत की उत्पत्ति के सम्बन्ध में अनेक धारणाएँ प्रचलित है। ऐसा मानते है, कि संगीत प्रकृति की देन है। सृष्टि की उत्पत्ति व विकास लौकिक व्यवहार में सूर्योदय, सूर्यास्त, वर्षा पक्षियो का कलरव, नदियों की कलकलाहट की ध्वनि इत्यादि प्रकृति के रूप है, इसी प्रकृति से संगीत की उत्पत्ति मानी गयी है। जिस प्रकार संगीत प्रकृति से प्राप्त हुआ है, उसी प्रकार मनुष्य का शरीर भी प्रकृति के पाँच तत्वों से बना है, संगीत मधुर ध्वनियों व लय में विशिष्ट नियमों के अनुसार होने वाला प्रस्फुटन है, मनुष्य व प्रकृति पर जिसका प्रभाव समान रूप से पड़ता है। सृष्टि के प्रत्येक तत्व एवं अवयव में संगीत की अक्षुणता व अखण्डता की धारा सदियों से बहती चली आ रही है। सम्पूर्ण ब्रम्हाण संगीतमय है।

अर्नेष्ट हंड अपनी पुस्तक ''स्पिरिट ऑफ म्यूजिक'' में लिखते है ''संगीत केवल सामान्य ध्वनि नही है, अपितु यह सूक्ष्म अंर्तवृतियों के उद्घाटन का सबल साधन है।

मानव संस्कृति की उपज कला से हुई है, कला की सहज प्रवृत्ति रचनात्मकता है अपने मनोगत भावनाओं को अभिव्यक्त करने के लिए कला विभिन्न माध्यमों का आश्रय लेती है, विभिन्न कलाओं में एक कला संगीत की है –

''गीतं वादयं तथा नृत्यं त्रयं संगीतमुच्यते''

(संगीत रत्नाकर)

अर्थात जिसमें गीत वाद्य तथा नृत्य तीनो का समावेश हो वही संगीत है।

न्यूलैन्ड स्मिथ का कथन है ''Art in the Manifestation of the Spiritual by Means of the Material'' इस आधार पर यह निश्चित हो जाता है कि संगीत भावाभिव्यक्ति का सबल साधन है।

संगीत भाव प्रधान कला मानी गयी है, भाव और कल्पना के आधार पर की गई स्वर रचना मन को आकर्षित करती है, चाहे वह

शास्त्रीय संगीत पर आधारित हो या लोक संगीत पर। लोक संगीत की यह विशेषता रही है कि वह मानव जीवन के बहुत समीप रहा है, लोक संगीत लोक की आत्मा है, लोक जीवन का सुन्दरतम प्रतिबिम्ब लोक संगीत में दिखाई पड़ता है क्योंकि लोक गीतो के शब्दों व स्वरों के चयन में लोक जीवन का सीधा–सीधा परिचय देखने को मिलता है।

प्रत्येक राज्य की अपनी अलग लोक कला संगीत होता है, जा उसका अमूल्य धरोहर होता है जो अपने राज्य की सांस्कृतिक विशेषताओं को परिभाषित करता है, इसी तरह छत्तीसगढ़ राज्य का भी लोक संगीत है यहॉ के लोक संगीत में भी एक विधा है ''पंडवानी'' जो लोक गाथा के नाम से प्रचलित है। लोक गाथा पंडवानी में सौन्दर्य, धर्म की पवित्रता एवं दर्शन की सार्थकता का विचित्र एवं विपुल संगम देखने को मिलता है।

''संगीत की दो धाराएं प्रवाहित है, मार्ग और देशी। प्रथम में शास्त्र के अनुगम के द्वारा कला की परिष्कृतता तथा अभिजातता पर ध्यान दिया जाता है, जबकि दूसरे में लोकाभिरूचि नियामक तत्व होता है तथा शास्त्र पक्ष गौण होता है।''05 पंडवानी संगीत की उपज लोक से हुई है, और लोक देशी के अंतर्गत आता है।

''सांगीतिक दृष्टि से पंडवानी लोक संगीत की एक विधा है। गीत संगीत और अभिनय की त्रिवेणी है। पंडवानी अलिखित लोकगाथा है और इसका प्रमाणिक मूलपाठ अनुपलब्ध है, जिसकी भविष्य में उपलब्धता की संभावना भी नही है, क्योंकि प्रत्येक गायक की गायन शैली अलग–अलग होती है। मूल कथा को छोड़कर भाषा बदलती रहती है। एक ही पंडवानी गायक के एक ही कथा–प्रसंग में यह भिन्नता सहज रूप से दिखाई पड़ती है।'' 06

छत्तीसगढ़ के लोक गीतों में चाहे वह प्रबंध गीत हो या लोकगाथा पंडवानी इन सभी में सांगीतिक तत्व अनिवार्य रूप से देखने का मिलता है।

---

(5) डॉ. श्रीधर परंजपे शरच्चन्द्र, भारतीय संगीत का इतिहास, पृष्ठ क्र. 6

(6) यादव पी.सी. लाल, छत्तीसगढ़ पंडवानी कथा गायन एक अध्ययन पृष्ठ क्र. 261

जैसा कि हमे ज्ञात है, लोक में प्रचलित संगीत को लोक संगीत कहते है, लोक संगीत को संगीत की अन्य गायन शैलियों या विधाओं में सबसे सरल इसलिए कहा जाता है क्योंकि यह संगीत के अन्य पक्षों की तुलना में सुनने समझने सीखने व गाने में अपेक्षाकृत सहज है तथा मनुष्य के नित्य और नैमित्यिक जीवन से प्रत्यक्ष रूप से जुड़ा हुआ है। वैसे तो छत्तीसगढ़ का पंडवानी लोक संगीत का एक रूप है किन्तु फिर भी यदा–कदा इसमें शास्त्रीय संगीत के कुछ तत्व समविष्ट है।

दादरा व कहरवा ये दोनो ही शास्त्रीय तालें है, किन्तु इन्हें लोक ताले भी कहते है, मुख्यतः लोक गीतों के साथ इन्ही तालों का प्रयोग होता है।

(1) <u>दादरा ताल</u> :– इस ताल में छः मात्राएँ होती है। दो विभाग होते है। इस ताल की पहली मात्रा में सम (X), तथा पाँचवी मात्रा में खाली (0) होती है।

मात्राएँ :–	1	2	3	4	|	5	7	7	8
बोल :–	ध	गे	न	ति	|	न	क	धी	न
चिन्ह :–	X					0			

(2) कहरवा ताल :– इस ताल में आठ मात्राएँ होती है। दो विभाग होते है। इस ताल की पहली मात्रा में सम (X), तथा चौथी मात्रा में खाली (0) होती है।

मात्राएँ :–	1	2	3	|	4	5	6
बोल :–	धा	धी	ना	|	धा	तू	ना
चिन्ह :–	X				0		

इन तालों का प्रयोग हम छत्तीसगढ़ के लोक संगीत पंडवानो में भी देखते है।

पंडवानी के संगीत पक्ष का अध्ययन कलाकारों की प्रस्तुति के आधार पर कर सकते है जो निम्नानुसार है–

(1) तीजन बाई

(2) ऋतु वर्मा

तीजन बाइ

पंडवानी की प्रस्तुति में कथा व गीतों में संगीत की अनुपम उपस्थिति देखने को मिलती है जिसे तीजन बाई अपने समूह कलाकारों के साथ बड़ी ही सहजता से प्रस्तुत करती है।

इस गीत को तीजन बाई ने गाया है साथ ही इनके समूह का भी महत्वपूर्ण योगदान है –

कथा योजना :– सारी सेना इकहठ्ठा कर और बड़ा प्यार से चर्चा करतह हबे कका .....। अरे सब काम तो होगे पर नगर द्वारका में अभी तक ले खबर नई पहुचे हे! राजा दुर्योधन अपन भवन में बैठे देख के चारो तरफ अपन सेना मनला कहे, सब तो सही ये आगेहे, पर हे कुरू पति, द्वारका नाथ ला खबर दे देव नई ? तो आप एक काम करो, आज ही निकल जाओ, अऊ नेवता देके बलराम अऊ कृष्ण ला आ जाआ ...। तो राजा दुर्योधन अपन घोड़ा में बैठ के, द्वारिका में जा पहुचे तो सही, पर श्री कृष्ण जी राजा दुर्योधन ला आते देख के, अऊ चादर तान सो गे ...। आऊ ओ देखीस त कीथे कन्हैया सोहे, अऊ सोये नींद जगाना ठीक नही कीके, आघु डाहर खुर्सी रीहिस तेला खिंच के पाछे में रख दिस, मतलब मुडसरिया तीर, अऊ अपन गोड़ हिलावत राजा दुर्योधन बईठे हे...। अऊ ओ तरफ ले बलधारी अरजुन रथ घोड़ा कुदात बड़ा सान से पहुचीन, अऊ जाके रूखमणी ला पुछने लगे, दीदी कन्हैया हे कहाँ ..? सोये हे अंदर में, सुन के राजा दुर्योधन पहली क बैठे हबे, और एक तरफ बलधारी अरजुन जब पहुचे...। जा के पैर के नीचे अरजुन बैठीस हे कका ... अऊ मार अटीयावत श्री कृष्ण जी उठीस ..!

(रिकार्ड)

गीत :–

भोला ला पुछे, पारवति गा ..
शंकर ला पुछे पारविति ... (2) .. रामा ...
हरी दरसन कब होए गा ..
भोला ला पुछे, पारवति ... भईय्या .. (2)
ये .. देख मुरारी अरजुन मुसकाए ...
भोला ला पुछे पारविति ... (2) .. रामा ...
दरसन कब होए गा ..
भोला ला पुछे, पारवति ... (2)

(रिकार्ड)

स्वर रचना :–

ध ध ध ध	ध – पध प
भो ला ला पु	छे ऽ पाड र
X	0
मग रे सा रेर	ग रे सा –
वति गा शं कर	ला पु छे ऽ
X	0
रे ग रे सा	सा – – –
पा ऽ र व	ति ऽ ऽ ऽ
X	0
धध – सासा –	रेर – रे रे
हरी ऽ हर ऽ	सन ऽ क ब
X	0
रेग रे – सा	रे ग रे सा
होए गा ऽ भो	ला ला पु छे
X	0
रे ग र –	सा सा – –
पा ऽ र ऽ	व ति ऽ ऽ
X	0
म – म म	म म म म
दे ऽ ख मु	रा री अ र
X	0
म – ग रे	सा – रे गरेसा
जु ऽ न मु	स ऽ का एऽऽ
X	0

संगीत पक्ष :–

इस गीत में मुख्य रूप से छः स्वरों का प्रयोग किया गया है जिसमें निषाद 'नि' वर्जित होने के साथ दोनो गंधार (ग व कोमल ग) का प्रयोग बड़ी ही सुन्दरता से किया गया है, इसमें मुख्य रूप से ताल कहरवा तथा दादरा दुगुन, चौगुन लय में बंधी हुई है।

कथा योजना :–

हे अरर्जुन, अरे कतका बेर के आए हस, अऊ कैसे मोर पैर के नीचे बईठे हस ...? त अरजुन कृष्ण ला कईथे कन्हैय्या में अभ्भी आए हो, अऊ आप मन जागे हो, आपे के दरसन पाएन, त राजा दुर्योधन बगल में पाछु तरफ बैठे रहे मुरसरीया मे, त ओ कथे ... ए कन्हैय्या, तब भगवान लहुट के देखथे कथे, अरे कुरू पति तहु आए हस, वॉह .. ये कब के आए बैठे हो, समझ गे नां, ओ अभ्भी आए हे, मोला करीब–करीब एक घंआ होगे हे, अऊ ओला, कब के आए हस अरजुन, कईसे आए हस अरजुन, वॉह... में बैईठेहो ते नई दिखत हे ..? त मोर अऊ पाछु डाहर ऑखी नई हेरे भईय्या, आघु डाहर आँखी हे त अरजुन भर ला देखे हो, अब तहु आए हस त तहुला देख डरेव ..! बात काहे...? त राजा दुर्योधन कथे मे नेवता दे बर आए हो। न्योता दे बर आए हस..? अरजुन ला पुछथे ते काबर आय हस? महु नेवता दे बर आए हो कन्हैय्या..! काबर ..?अरे लड़ाई के तैयारी कर डरे हन, त मैहा सोचेओ के चलके कन्हैय्या ला नेवता दे देथन, बीना नेवता हीकारी के नई आबे कीकेकृआए हवऽऽऽ ...भगवान श्री कृष्ण कइथे, बहुत सुन्दर बात ए, दुद झन नेवता देवईया हे, अऊ दुदु झन नेवता देवईया में एक्के झन हो ..! पर एक काम कर ले, दुन्नो झन ला मै निराश नई कर सकौ..! मै बटवारा कर दैव...? अपन अपन बारे ले जेनला रूचि आही, जेन पसंद आही ऊही ला लेग जहु..! तो राजा दुर्योधन बोले ... हा. .. हा, बोल ना का बोलत हस तेला, एक काम कर एक तरफ मोर पुरा नारायनी सेना, हाथी, घोड़ा, खडग्न, तलवार, सूल, मोदगर समझगेस ना ..! अऊ एक तरफ मै अकेला..! अऊ एक बात अऊ सुन ले, दोनो झने मिल के

सुनो, के मै कुरूक्षेत्र मैदान में भूल के भी सस्त्र नई चलाओ, जे जान पड़े तो लेगआ, नई तो मोला, छोड़ देओ भइय्या, सैना ला ले चलौ..!

(रिकार्ड)

गीत :–

सावन बीना बिजली, ना चमके भईय्या,
भादो बीना बरस, ना बरसे भईय्या .. (2)
देख मुरारी के मन घबरागे रे ...
सावनी बीना ...
एक तरफ या सर्व सैना हाबे रे ...
सावन बीना ...
सुन के राजा ये झट ले बोली वोले रे ...
सावन बीना ...

(रिकार्ड)

रचना :–

	सा
	सा
रेर – –	ग रे –
वन ऽ ऽ	बी ना ऽ
X	0
रे रे –	ग रे –
बि ज ऽ	ली ऽ ऽ
X	0
सा – रे–	– सा –
ना ऽ चम	ऽ के ऽ
X	0
सा सा –	– – सा
भ ई या	ऽ ऽ भा
X	0
रे – –	ग रे –
दो ऽ ऽ	बी ना ऽ
X	0

रे रे र	ग रे —
ब र ऽ	स ऽ ऽ
X	0
सा — रे—	सा — —
ना ऽ बर	से ऽ ऽ
X	0
सा सा —	— — —
भ ई या	ऽ ऽ ऽ
X	0
म म म	म म म
दे ख मु	रा रां के
X	0
म प म	य ग रे
म न घ	ब रा गे
X	0
म म म	म म म
ए क त	र फ या
X	0
म प म	म ग रे
स र्व सै	ना हा बे
X	0
म म य	म म म
सु न के	रा जा ये
X	0
मप म म	म ग रे
झट ले बो	बी बो ले
X	0

संगीत पक्ष :–

इस गीत में मुख्य रूप से पॉच स्वरों का प्रयोग किया गया है, जिसमें गंधार कोमल तथा शेष स्वर शुद्ध रूप से प्रयुक्त हुए है तथा धैवत व निषाद वर्जित है। इस गीत में ताल दादरा का द्रुत लय में प्रयोग किया जाता है।

कथा योजना :–

राजा दुर्योधन झट से बोले, ऐ कन्हैय्या, मुझे आप नही चाहिए, तोला ले जा के दार–भात खवाना हे का, अऊ ओ भी लडो नई बोलत हस, अऊ बिना लड़ने वाला मोला नई चहिए, मोला पुरा सैना चहिए, आप ला नई, दुनिया कुछ भी होए, मुझे सैना चईए, भगवान श्रीकृष्ण मधुर मुस्कान कर, अऊ अरजुन के तरफ इसारा कर के देखे, कैसे ते का करबे, ओ तो पुरा सैना लेगे ... तब के दारी बल धारी अरजुन दोनो हाथ जोड़ के कहे, कन्हैय्या मोला सैना और हाथी, घोड़ा, सुल, मोदगर नइ चईए, मात्र मोला तोला चाहिए .. ।

इस पकार पाण्डवानी की यह कथा, पाण्डवानी गीतों की छोटी–छोटी रचनाओं के साथ आगे बढ़ती है। जो श्रोताओं को मंत्रमुग्ध तो करती ही है, साथ–साथ उन्हे धर्म पक्ष को साथ लेकर चलने की प्रेरणा देती है।

(रिकार्ड)

रितु वर्मा

गीत :–

मन मोहन राजा,
हरी के भजन में लागे,
रहो ना जी ... (4)
मोर गिरवर धारी,
हरि के भजन में लागे
रहो ना जी ...
मोर द्वारीकाऽऽ
हरि के भजन में लागे,
रहो ना जी ...

(रिकार्ड)

स्वर पक्ष :–

							सा–
							मन
धसा	सा–	रे	ग	–र	ग	रे	सा
मोह	नऽ	रा	जा	ड़ह	रि	के	भ
x				0			
रे–	ग–	रे	सा	–	रे	रे	रे
जन	मेऽ	ला	गे	ऽ	र	हो	ना
x				0			
सा	–	–	–	–	–	–	सा–
जी	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	मोर
x				0			
धसा	सा–	रे	ग	–रे	ग	रे	सा
गिर	वर	धा	री	ड़ह	रि	के	भ
x				0			
रे–	ग–	रे	सा	–	रे	रे	रे
जन	मेऽ	ला	गे	ऽ	र	हो	ना
x				0			
सा	–	–	–	–	–	–	सोइ
जी	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	मोर
x				0			
धसा	सा–	रे	ग	–र	ग	रे	सा
द्वा	रि	का	ऽ	ड़ह	री	के	भ
x				0			
रे–	ग–	रे	सा	–	रे	रे	रे
जन	मेऽ	ला	गे	ऽ	र	हो	ना
x				0			
सा	–	–	–	–	–	–	सा–
जी	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	मन
x				0			

संगीत पक्ष :– प्रस्तुत गीत में (सा,रे,ग ध) मुख्यतः चार स्वरों का प्रयोग किया है। जिसमें गंधार कोमल तथा शेष स्वर शुद्ध है। इन स्वरों का उपयोग कर एक सुंदर रचना बनाई गई है, जिसे ताल कहरवा में पीरो कर बहुत ही सुंदर ढंग से प्रस्तुत किया गया है। तथा गीत के बीच में कथा संवाद के लिए ताल दादरा का मध्यलय में उपयोग किया गया है।

गीत :— ये दे लाज बचईय्या, कोनो गा

ये दे नइ ए गा, यम जय हरि (2)

ये दे माता द्रौपति, देखे जी

ये दे बोले गा, मम जय हरि ...

(रिकार्ड)

स्वर रचना :—

	ध सा
	ये दे
रे म ग	रे— सा —
ला ज ब	चई रया ऽ
X	0
रे ग रे	— सा सा
को नो गा	ऽ ये दे
X	0
रे— ग रे	— रेसा —
नइ ऐ गा	ऽ य म
X	0
सा— सा सा	— ध सा
जय ह रि	ऽ य दे
X	0
रे म ग	रे सा —
मा ता द्रौ	प ति ऽ
X	0
रे ग रे	— सा सा
दे खे जी	ऽ ये दे
X	0
रे ग रे	— रेस सा
बो ले गा	ऽ य म
X	0
सा— सा सा	— — —
जय ह रि	ऽ ऽ ऽ
X	0

संगीत पक्ष :— प्रस्तुत गीत में चार शुद्ध स्वरों का (सा रे ग म म ध) एवं दोनो गंधार का प्रयोग कर सुंदर रचना बनाई गई है। तथा दादरा के ठेको में ध्रुत लय के साथ बांधा गया है।

इस रचना में मुख्यतः 5 स्वरों का प्रयोग किया गया है, जिसमें क्रमशः स,रे,ग,म,ध शुद्ध तथा कोमल गंधार है। इस गीत को दादरा के ठेकों में द्रुत लय में गति प्रदान की गई है।

ये स्वर रचनाएँ मुख्य रूप से चार से पाँच स्वरों के इर्द—गिर्द ही घूमती है। इन रचनाओं में कोमल गंधार ही प्रयुक्त हुआ है, रचनाओं को स्थाई, अंतरा जैसे अलग—अलग चरणों में नही गया जाता। इसी तरह पंडवानी के अन्य कलाकारों के संगीत प्रस्तुति में स्वरों व तालों का प्रयोग देख सकते है, और कलाकार इसे नाटक के रंग संगीत की तरह प्रस्तुत करते है। छत्तीसगढ के पंडवानी में संवाद के बीच में छोटी छोटी स्वर रचनाएँ गाई जाती है, इन स्वर रचनाओं में मुख्य रूप से चार से पाँच स्वरों का प्रयोग देखने को मिलता है, प्रायः इन रचनाओं में कोमल गंधार (ग) प्रयुक्त हुआ है। प्रायः गीत के बीच—बीच में रामे रामे; हौ दीदी; हौ भाई; है जी जैसे सम्बोधन शब्दों का प्रयोग किया जाता है जो लोकगाथा पंडवानी के संगीत पक्ष को दर्शकों के समक्ष रूचिकर व आकर्षक बनाती ह।

पंडवानी में प्रयुक्त गीत रचनाएँ शास्त्रीय संगीत की तरह लीपिबद्ध या लिखित रूप में सामान्यतः देखने को नही मिलती किन्तु यहाँ इन रचनाओं को स्वर ताल लीपि में पिरोने का प्रयास किया गया है ये रचनाएँ जन—सामान्य के मौलिक व नैतिक जीवन से जुड़े होने के कारण उन्हें अपनी ओर आकर्षित करती है, तथा ये सीखने—सुनने व समझने में भी आसान है। यदि कोई भविष्य में इस विषय पर (पंडवानी का संगीत पक्ष का विस्तृत अध्ययन करना चाहता हो या इन गीत रचनाओ को सीखना चाहता हो तो इस स्वर लीपि के माध्यम से अपने अध्ययन को अधिक प्रभावी तथा प्रमाणिक बना सकता है।

पंडवानी का संगीत पक्ष शास्त्रीय संगीत की तरह रीतिबद्ध (लीपिबद्ध) नही है। ये लोक संगीत का एक रूप है फिर भी हमे इसकी प्रस्तुति में शास्त्र की ही तरह स्वर रचना और तालों की लयबद्धता कही न कही देखने को मिलती है।

वाद्य

आदिमानव काल से हो वाद्यों का प्रयोग किया जा रहा है, उस समय किसी आदिमानव को मरे हुए जानवर की खाल या चमड़ा मिला होगा और उसने लकड़ी से उसे पीटा होगा जिससे उसमें ध्वनि उत्पन्न हुई होगी वही से कही न कही चमड़े के वाद्यों की उत्पत्ति हुई होगी। चमड़े से मढ़े वाद्यों का पयोग ये किसी बात को सूचित करने या संदेश को पहुंचाने के लिए करते थे।

पौराणिक ग्रंथों के आधार पर ही नही बल्कि वैज्ञानिक प्रमाणों से भी यह सिद्ध हो चुका है, कि सारा ब्रम्हाण्ड एक निश्चित गति लय से बंधा हुआ है। प्रकृति के प्रत्येक कलाप में नियमित लय दिखाई देती है इसी लयबद्धता को शब्दों के साथ जोड़कर गीत की रचना की गई होगी तथा संगीत वाद्यों की उत्पत्ति की गई होगी।

सिद्धान्त रूप में कहा जाए तो ऐसी वस्तु जो ध्वनि उत्पन्न करती है उसे वाद्ययंत्र कहते है, वाद्य यंत्रों के निर्माण का प्रयोजन संगीत की ध्वनि निकालने क लिए किया गया था।

इन लोक वाद्यों का सम्बन्ध लोक जीवन में सहज रूप से उपलब्ध वस्तुओं से है जैसे– कटोरा, थाली, लोटा, मिट्टी की मटकी कॉसे की कसैडी इत्यादि लोक वाद्यो के रूप में प्रयुक्त किए जाते है इनका प्रयोग लोक जीवन में दैनिक रूप में किया जाता है। भारत के प्रत्येक राज्य में लोकवाद्य हमे देखने को मिलते है, जिसमें से एक राज्य छत्तीसगढ़ (छ.ग.) है, जिसके लोक वाद्यों का वर्णन यहॉ संक्षिप्त रूप में किया जा रहा है।

छत्तीसगढ़ के लोकवाद्य

छत्तीसगढ़ लोक संगीत में प्रयोग होने वाले लोकवाद्यों का विभाजन निम्नानुसार किया जा रहा है –

(1) तंतु वाद्य :– वे लोक वाद्य जो तार के माध्यम से बजाए जाते है, तंतु वाद्य कहलाते है इसके अर्न्तगत तम्बूरा, चिकारा, सारंगी, रसराज आदि आते है।

(2) सुषिर वाद्य :– ऐसे वाद्य जिन्हे फूक कर बजाया जाता है सुषिर वाद्य कहलाते है जैसे– मोहरी, बाँसुरी, नगडेवन, बीन, बांस और अलगोजा वाद्य इत्यादि।

(3) अवनद्य वाद्य :– अवनद्य (अवनद्ध) वाद्यों को चर्म वाद्य भी कहते है इसके अर्न्तगत ढोलक, नंगाड़ा, दमऊ, चोंग गुदुम (सींग बाजा), तबला, तासक, मांदर, खंजेरी आदि आते है।

(4) घन वाद्य :– ऐसे वाद्य जो धातु से निर्मित होते है घन वाद्य कहलाते है जैसे खड़ताल, घुंघरू, झांझ, मंजीरा आदि शामिल है।

इन लोक वाद्यों में कुछ का प्रयोग पंडवानी लोक गाथा के संगीत में किया जाता है, जो पंडवानी प्रस्तुति का और आकर्षक बनाते है, ये निम्नानुसार है –

तम्बूरा, करताल, खंझेरी, तबला, बांसुरी, मंजीरा, ढोलक। इसके अलावा हारमोनियम, बैंजो और ताशा का भी प्रयोग होता है।

(1) तम्बूरा :– तम्बूरे को आदिवाद्य भी कहते है, इसका सम्बन्ध नारद मुनि जो कि संगीत प्रवीण थे से जोड़ा जाता है, तम्बूरा सहज, सुलभ और सस्ता वाद्य है। यह स्थानीय तौर पर उपलब्ध वस्तुओं से बनाया जाता है।

एक तुम्बा जो छोटा गोल किन्तु कुछ चपटा हो जिसकी लम्बाई लगभग तीन फुट हो जिसमें बॉस का टुकड़ा फसाया जा सके, और इसका ऊपरी हिस्सा गोलाकृति में काटकर इसमें खाल को मढ़ा जाए जिसमें पीतल या लोहे की तार जिसकी संख्या एक से लेकर तीन तक हो लगाई जाए इस तरह से तम्बूरे का निर्माण होता है।

पंडवानी गायक–गायिकाएँ इस तम्बूरे के तारों को अपने स्वर के अनुसार ''झुनकी'' से कस कर झंकृत करते है, जिससे ध्वनि उत्पन्न होती है। तम्बूरे के ऊपरी भाग पर मयूर पंख या रंग बिरंगी कलगी लगाई जाती है, तम्बूरे को रंग–पेंट से रंग कर इसमें चमकदार जरी–गोटे, फीते, आदि लगाकर इसकी सजावट की जाती है, जिससे तम्बूरे में आकर्षण पैदा होता है।

(2) <u>करताल</u> :– करताल का अर्थ स्वयं अपने आप में स्पष्ट है, करताल अर्थात हाथ की ताल। करताल को खड़ताल भी कुछ लोग कहते है। यह लकड़ी के बने होते है, ग्यारह अंगुल लम्बे गोल डंडों को करताल कहते है, जिसके दो टुकड़े होते है, इन दोनो टुकड़ों को हाथ में ढ़ीला पकड़कर पंडवानी कलाकार बजाते है।

(3) <u>खंझेरी</u> :– यह एक लोकवाद्य है खंझेरी लकड़ी लकड़ी को खोलकर बनाई जाती है, इसमें गोहिया (गोह) की खाल मढ़ी जाती है, लकड़ी के भाग में छेद कर टीन पीतल की तस्तरी या घुंघरू लगाई जाति है एक हाथ से खंझेरी को पकड़ा जाता है तथा दूसरे हाथ की ऊंगलियों व हथेली से इसे बजाया जाता है पंडवानी गाथा में इसका प्रयोग ताल उत्पन्न करने के लिए किया जाता है।

(4) <u>तबला</u> :– यह चर्म वाद्य है, तबले के दो भाग होते है, पहला तबला दूसरा डग्गा। इन्हे ''नर व मादा'' भी कहा जाता है। कह काठा, सीसम,

बीजा, खम्हार आदि लकड़ियों को खोलकर बनाया जाता है, इसके ऊपर बकरे की खाल को चमड़े की मोटी रस्सी से मढ़ा जाता है, चमड़े के बीच भाग में स्याही या राल लगाई जाती है। ''दुग्गड'' स्टील, पीतल, मिट्टी या रांगा आदि धातु का बना होता है, यह काठा से कुछ ज्यादा चौड़ा तथा गोलाकार में होता है, काठ की तरह ही इसे भी बकरे की खाल से मढ़ा जाता है, कांठा का मुँह संकरा और दुग्गड का मुँह चौडा होता है।

ताल की दृष्टि से देखा जाए तो तबला पंडवानी में प्रयुक्त होने वाला प्रमुख वाद्य है। तबला वादक गायक के गायनानुसार ताल देकर लय को संतुलित बनाए रखता है, तबले में अधिक शुद्धता व स्पष्टता देखने को मिलती है, साथ ही ताल–मात्राओं को बड़ी ही सुगमता से तबले पर उत्पन्न किया जाता है, तबले की इसी विशेषता के कारण पंडवानी कलाकारों ने इसे सहज रूप से स्वीकार कर लिया है।

(5) <u>ढ़ोलक</u> :– ढ़ोलक या ढ़ोलकी यह भारतीय वाद्य यंत्र है। ढ़ोलक बजाना आनन्द का सूचक है यह मुख्य रूप से भक्ति संगीत या लोक संगीत में ताल देने के काम आता है। ढ़ोलक का खोल लकडी का होता है, इस पर बकरे का चमड़ा मढ़ा जाता है एवं लोहे की पतली कडियां जिसे ''चुटका'' कहते है, लगी रहती है, सूत की रस्सी व चमड़े द्वारा खीचंकर इसे कसा जाता है।

(6) <u>बाँसुरी</u> :– बाँसुरी आदि वाद्य होने के साथ–साथ लोक वाद्य की श्रेणी में भी आता है, जिसका प्रभाव छत्तीसगढ़ लोक जीवन में स्पष्ट दिखलाई पड़ता है। यह भगवान श्री कृष्ण का प्रिय वाद्य है। बाँसुरी बाँस की बनी होती है, पंडवानी लोकगाथा में इसका प्रयोग समय–समय पर किया जाता है।

(7) मंजीरा :– झांझ का छोटा स्वरूप मंजीरा कहलाता है, यह धातु के गोल टुकड़े से बना होता है, मंजीरे में ताल देने की क्षमता के साथ–साथ मधुरता भी होती है। पंडवानी गाथा में ''रागी'' ही मंजीरा बजाने का कार्य करते है, वे अपने हाव–भाव व हास्य विनोद से श्रोताओं का भरपूर मनोरंजन करते है।

(8) ताशा :– ताशा का उपयोग छत्तीसगढ़ की लोक कला में वाद्य यंत्रों के रूप में किया जाता है। ताशा मिट्टी की पकी हुई कटोरी (परई) नुमा एक आकार का होता है, यह बकरे के चमड़े से मढ़ा हुआ होता है इसे बांस की पतली डंडी से बजाते है। यह बहुत ही प्रचलित वाद्य है, यह पोले होते है, इसका प्रयोग पंडवानी में वादन रूप में होता है।

(9) हरमोनियम :– पंडवानी गायन में हारमोनियम का प्रमुख स्थान है, स्थानीय बोली में इसे 'हरमुनिया या ''रहिमुनिया'' भी कहते है। वर्तमान मे तम्बूरे के स्थान पर स्वर साधना के लिए हारमोनियम का प्रयोग करते है। यह इतना मधुर व सरल है, कि प्रायः सभी छत्तीसगढ़ी लोकगीतों में इसका प्रयोग देखने को मिलता है। हारमोनियम में तीन सप्तक होते है, इसमें रीड होता है, जिसको दबाने से संगीत के स्वर उत्पन्न हाते है। हारमोनियम का स्वरूप पेटी के आकार का होता है, जिसके कारण स्थानीय लोग इसे अपनी लोक भाषा में पेटी भी कहते है।

(10) बैंजो :– हारमोनियम की तरह बैंजो भी ''रीड'' से बजाया जाने वाला वाद्य है। भले ही यह विदेशी वाद्य है, किन्तु इसकी मधुरता और कर्ण प्रियता के कारण लोक कलाकारों ने इसे सहज रूप में स्वीकार कर लिया है, छत्तीसगढ़ की लोक कला मंडलियों द्वारा इसकी अनिवार्यता लगभग सुनिश्चित कर ली गई है, जिसके कारण यह वाद्य हमें पंडवानी में भी देखने को मिलता है।

वेशभूषा/रूप सज्जा

भारत एक विशाल देश है, यहाँ विविधता में एकता देखने को मिलती है, यहाँ के परिधान साज–सज्जा व वेशभूषाओं से भिन्नता होते हुए भी समस्त भारतीय एक है, हमारे देश की लोक सांस्कृतिक सम्पदा पर प्रत्येक भारतवासी को गर्व है, लोक नृत्य भारतीय एकता के सूत्र है। लोक जीवन का कोइ भी क्षेत्र लोक नृत्य से अछूता नही है, इसलिए यह व्यापक एवं विविध होने के साथ–साथ मनोरंजक भी है। लोक नृत्यों का मर्म उनकी निर्धारित वेशभूषा एवं साज–सज्जा में है, यही इनकी वास्तविक पहचान है। साज–सज्जा एवं वेशभूषा लोकनृत्यों का दर्पण है, जो इन्हे और अधिक आकर्षक एवं सजीव बनाता है। जिन लोकनृत्यों में जैसी मान्यताएँ परम्पराएँ एवं सांस्कृतिक व भौगोलिक स्वरूप होता है, उनकी रूप–सज्जा, साज–सज्जा व वेशभूषा भी तदनुरूप होती है। सामाजिक, सांस्कृतिक जीवन, रीति रिवाज, अर्थ व्यवस्था प्राकृतिक सौन्दर्य एवं आध्यात्मिकता आदि का प्रभाव भारतीय लोकनृत्यों की वेशभूषा एवं साज–सज्जा पर स्वाभाविक रूप से परिलक्षित होता है।

लोक नृत्यों के प्रत्यक्ष अवलोकन करने से निर्विवाद रूप से स्थापित हुआ है, कि कोई भी लोकनृत्य उसके नृत्यकारों के परिधान, आभूषण एवं श्रृंगार प्रसाधन क अभाव में निष्प्राण है।

''मानव मात्र में सजने संवरने की अभिरूचि नैसर्गिक रूप से प्राप्त है, पुरूषों की अपेक्षा महिलाओं में ये मूल प्रवृत्ति सर्वाधिक बलवती होती है। इस सत्य को नकारा नही जा सकता कि हमारी भारतीय ग्रामीण महिलाओं को अपने श्रृंगार परिधान एवं आभूषणों के प्रति अगाध प्रेम श्रद्धा एवं मोह है, शरीर के प्रत्येक अंग अर्थात् नख से शिख तक विभिन्न अंगोपांग में तरह–तरह के धारण किए जाने वाले श्रृंगारो, परिधानों एवं आभूषणों में उनके सांस्कृतिक लोक विश्वास अनन्त है।'' 7

---

(7) पटेल कदारनाथ, अविनाषी समयदास, प्रबोध छत्तीसगढ़ी सामान्य ज्ञान

मेकअप :–

पुरूष कलाकारों की अपेक्षा स्त्री कलाकार ही मेकअप की ओर ज्यादा ध्यान देती है। कोयला, मुरदालशंख, हरताल, गेरू, छुई मिट्टी (खडिया) सिंदूर, अभ्रक राख, चंदन आदि का उपयोग पहले रूप सज्जा के लिए किया जाता था उस समय सामग्री सस्ती व सुलभ हुआ करती थी। पण्डवानी के विकास ने मेकअप को भी प्रभावित किया।

वर्तमान समय में मेकअप के प्रसाधनों में परिवर्तन हुआ, अब स्त्रियों द्वारा चेहरे को फाउण्डेशन, बेस फेस पाउडर से सँवारा जाता है, होठों को पान खाकर या लाली, लिपिस्टिक से सजाया जाता है ऑखों में काजल या लाइनर का प्रयोग किया जाता है, माथे पर कुमकुम, बिन्दी लगाते है पैरों पर आलता लगाया जाता है, मेकअप में इन सभी प्रसाधनों का प्रयोग सामान्य सा हो गया है।

पुरूष कलाकार भी मेकअप के लिए फाउण्डेशन, बेस का इस्तेमाल करने लगे है साथ ही माथे पर तिलक, आँखों में काजल और होठों को हल्की लिपिस्टिक या पान खाकर रचाते है।

वेशभूषा :–

पंडवानी प्रस्तुति के समय महिलाएँ लोधी साडी, ब्लाउज, पेटिकोट आदि पहनती है।

पुरूष :– धोती, कुर्ता, पैजामा, साफा, जैकेट आदि पहनते है।

आभूषण :–

दुनिया का कोई भी भाग हो हर जगह आभूषणों का अपना अलग ही महत्व रहा है, इन आभूषणों का प्रयोग कई वर्षों से महिलाए सजने संवरने के लिए करती है। हर प्रांत की अपनी अलग पहचान वहाँ के आभूषणों से भी होती है।

छत्तीसगढ़ मे पारंपरिक गहनों से सजी स्त्री अब लोक मंचों मे भी दिखाई देती है जैसे पंडवानी गायिका तीजन बाई पंडवानी की प्रस्तुति

हेतु जब मंच पर उतरती है, तब वह छत्तीसगढ़ी गहनों का प्रतिनिधित्व करते हुए नजर आती है।

स्त्रियों के गहने :–

(1) जूड़े व चोटी के गहने – महिलाएँ बालो को भी विशेष प्रकार के गहनों से सजाती है, जैसे जूड़े व चोटी में धारण किए जाने वाले कुछ खास गहने है, जिसमें जंगली फूलो, पंख, कौडियां, सिंगी परांदा आदि प्रमुख है।

(2) माथे पर लगाए जाने वाले श्रृंगार :– माथे पर बिन्दी या टिकली लगाई जाती ह, आजकल अनेक डिजाइन की टिकली आने लगी है, महिलाएँ धातु से बनी बिंदी को गोंद से चिपका कर माथे पर लगाती है।

(3) कान के अनोखे गहन :– कान में पहने जाने वाले आभूषणों के अनेक प्रकार है जैसे–ढार, तरकी, खिनवां, बारी, फूल संकरी, लुरकी, लवंग फूल, झुमकी, कनछडी इत्यादि ये आभूषण इतने खूबसूरत होते है, कि आजकल इनकी नकल आधुनिक डिजाइनों में किया जाने लगा है।

(4) नाक के गहने :– नाक में पहने जाने वाले आभूषण भी यहां खास प्रकार के होते है, यहां तक कि उनके प्रकार के आधार पर पहले महिलाएं कौन सी जाति की है इसका पता लग जाता था। यहॉ नथ, नथनी, लवँग, फुल्ली आदि धारण करने का प्रचलन है।

(5) गले की शोभा बढ़ाने वाले गहने – वर्तमान में गले में पहने जाने वाले आभूषण सूंता, पुतरी, कलदार, सुर्रा, सँकरी, तिलरी रूपया माला, हमेल तथा हँसुली है।

(6) बाजू, कलाई और उंगलियों के गहने– चुरी बहुटा, कडा, हरैया बनुरिया, ककनी, नाँगमोरी, पटा, पहुँची, ऐठी, मुंदरी आदि।

(7) कमर में पहने जाने वाले गहने – चाबी, गुच्छ, भारी और चौड़े कमरबंद और करधन आदि।

(8) पैरों के रूनझुन करते गहने–नख से शिख तक के श्रृंगार मं पैरों में पहने जाने वाले आभूषणों का अपना अलग ही महत्व है। पैरों में पैरी, तोड़ा, सांटी कटहर, चुखा, पैरी लछ्छा, चुटकी, बिछिया आदि पहना जाता है।

मंच

आदिम संस्कृति में प्रस्तुति स्थलों के इतिहास को देखे तो ऐसा कोई ठोस प्रमाण नहीं मिलता की प्रस्तुति स्थलों का उद्‌भव और विकास कैसे हुआ होगा। विद्वानों ने मात्र अनुमानों के आधार पर ही अपनी बातों को प्रमाणित करने की कोशिश की है। ''प्रस्तुति स्थलों के विकास के विषय में ठोस या ज्ञात प्रमाण देखे तो युनान के प्रेक्षागृह तथा भरत मुनि के नाट्‌य शास्त्र में वर्णित नाट्‌य शालाओं से ही प्रारम्भ माना जा सकता है।'' 8

नाट्‌यशास्त्र का शास्त्रीय रंगमंच

भरतमुनि ने नाट्‌य शास्त्र के द्वितिय अध्याय में प्रेक्षागृह के विषय में विस्तार पूर्वक चर्चा की है वह स्थान जहाँ कलाकार अपनी प्रस्तुति देता है प्रेक्षागृह कहलाता है। कुछ विद्वान प्रेक्षागृह को स्टेज तो कुछ प्रस्तुति स्थल तो कुछ रंगमंच भी कहते है।

नाट्‌यशास्त्र में शास्त्रीय रंगमंच के बनावट के सन्दर्भ में बड़े विस्तार से चर्चा की गई है। बनावट के पूर्व जिन विशिष्ट बातों की ओर ध्यान आकृष्ट कराया गया है उनमें भूमि, निर्माण कार्य पारंभ करने के लिए नक्षत्र माप के लिए डोरी, अनुकूल मुहूर्त, तिथि और करण देखकर ब्राम्हण

---

(8) डॉ. यदु हेम, छत्तीसगढ़ का पुरातात्विक वैभव, बी.आर. पब्लिकेशन, कार्पोरेशन 2002 पृष्ठ क्र. 53 से 54

का तृत्त करके पुण्याह वायन करके शांति जल देकर डोरी से नापने का विधान किया गया है। नाट्य मंडप के निश्चित आकार–प्रकार के अनुसार निर्माण प्रक्रिया प्रारंभ हो तब निर्धारित भूमि के दो भाग किए जाएं। उसके पीठ के भाग में दो भाग करके और उसके बराबर आधे भाग में रंगशीर्ष और पश्चिम भाग में नेपथ्य गृह बनाया जाए। तब शुभ नक्षत्र योग में शंख, दुन्दुभि, मृदंग, प्रणव, घंटी–घड़ियाल आदि बाजों के साथ मंडप की स्थापना की जाए। अनिष्ट पुरूषों को ऐसे अवसर पर वहां से हटाने के निर्देश है। रात को दशों दिशाओं में गन्ध, पुष्प, फल और अनेक प्रकार के भोज्य पदार्थो के साथ विभिन्न दिशाओं में खाद्यान्न की बलि देकर दिशा के अधिष्ठाता देवताओं को उनके मंत्र के साथ बलि समर्पित करने का विधान है।

नींव डालने, भीत खड़ी करने, स्तम्भ स्थापना करने, ब्राम्हण को दक्षिणा देने और गौदान करने, पुरोहित और राजा को खोर और कारीगरों को नमकीन खिचड़ी खिलाने का निर्देश मुनिय द्वारा दिया गया है। इसी भांति शास्त्रीय विधि से स्तंभ, द्वार, भीत और नेपथ्य घर बनाने की बात कही गई है। रंगपीठ के पीछे अर्थात् रंगशीर्ष पर लगभग डेढ़ हाथ ऊंचे चार खम्भों पर मत्तवारिणी (मथवारो या अम्बारी) बनायी जाए और रंगपीठ तथा मत्तवारणी दोनो पर समान ऊंचाई का रंग मंडप बनाया जाये। इनकी सजावट के लिए भी निर्देश दिए गए है।

रंगशीर्ष के निर्माण के समय यह ध्यान रखने को कहा गया ह कि वह न तो कछुए की पीठ जैसा ऊंचा हो, न मछली की पीठ के समान ढलवां ही हो, प्रत्युत शुद्ध दर्पण के समान चिकना, समतल रंगीशीर्ष हो तभी वह श्रेष्ठ समझा जावेगा। इसमें रत्न जड़े जाने के निर्देश दिए गए है। रंगशीर्ष के निर्माण के पश्चात् लकड़ी का काम कराने, विभिन्न प्रकार की कलाओं के प्रयोग के द्वारा उनकी सज्जा कराने, सर्पों की आकृतियां, कठपुतलियां, झरोखे, वेदियां, जाली, पीठ व धरन अनेक रंगों से रंगी हुई सुसज्जित कलात्मक वस्तुओं के निर्माण की बात कही गई है। अंत में दीवार, उनमें स्तम्भ, खूंटी, झरोखे, कोने द्वार आदि रखने के साथ ही

नाट्य मंडप को पर्वत की गुफा की आकृति वाला, दो भूमि तल वाला बनाने, छोटी–छोटी खिड़कियां बनवाने ताकि वायु न आ सके और न शब्द गूंजे, जिससे गाने बजाने वाले के स्वर की गंभीरता बनी रहे ऐसे स्पष्ट निर्देश दिए गए है।

<u>प्रेक्षागृहों के विधान</u> :–

आचार्य ने अपने नाट्यशास्त्र में तीन प्रकार के प्रेक्षागृहो विधान किया है :–

1, विकृष्ट (लम्बा आयताकार)

2. चतुरस्त्र (वर्गाकार)

3. त्रयस्त्र (त्रिभुजाकार या तिकानो)

ये तीनों तीन–तीन परिमाण के होते है :–

ज्येष्ठ, मध्यम और कनिष्ठ। विकृष्ठ ज्येष्ठ प्रेक्षागृह 108 हाथ लम्बे होते है। मध्यम 64 हाथ लम्बे और कनिष्ठ 32 हाथ लंबे बनाने के निर्देश दिए गए है। इन तीनों प्रकार के प्रेक्षागृह के ज्येष्ठ, मध्यम और कनिष्ठ आकार के माप निम्नानुसार बतलाए गए है –

1.	''विकृष्ठ ज्येष्ठ प्रेक्षागृह	–	108 X 54 हाथ
	विकृष्ठ मध्यम प्रेक्षागृह	–	64 X 32 हाथ
	विकृष्ठ कनिष्ठ प्रेक्षागृह	–	32 X 16 हाथ
2.	चतुरस्र ज्येष्ठ प्रेक्षागृह	–	108 X 108 हाथ
	चतुरस्र मध्यम प्रेक्षागृह	–	64 X 64 हाथ
	चतुरस्र कनिष्ठ प्रेक्षागृह	–	32 X 32 हाथ
3.	त्रयस्र ज्येष्ठ प्रेक्षागृह	–	108 हाथ लम्बा
	त्रयस्र मध्यम प्रेक्षागृह	–	64 हाथ लम्बा
	त्रयस्र कनिष्ठ प्रेक्षागृह	–	32 हाथ लम्बा।'' 9

———————————

(9) शुक्ल बाबू लाल शास्त्री, नाट्य शास्त्र, चौखम्बा पब्लिकेशन, पृष्ठ क्र.

छत्तीसगढ़ के प्रस्तुति स्थलों का अध्ययन

छत्तीसगढ़ में प्रस्तुति स्थलों का इतिहास उतना ही पुराना है जितना कि युनान और रोम के प्रस्तुति स्थलों का माना जाता है। हमें छत्तीसगढ़ में प्रस्तुति स्थलों का ज्ञात इतिहास सीताबेगरा और जोगीमारा गुफा से मिलता है। इतिहासकारों ने इसका स्थितिकाल पहली शताब्दी से दूसरी शताब्दी माना है। छत्तीसगढ़ में प्रस्तुति स्थलों का अध्ययन स्थायी और अस्थायी तौर पर कर सकते है जो निम्न प्रकार से है :–

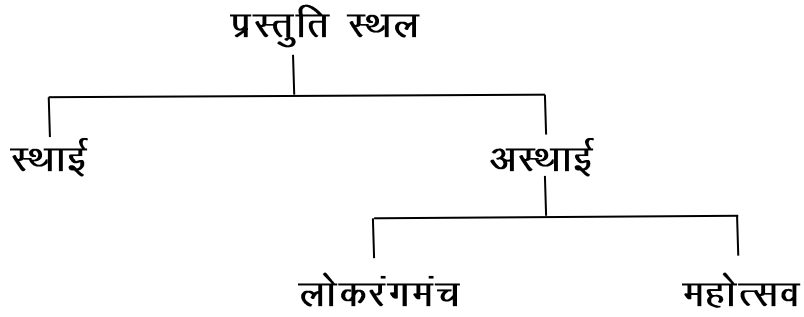

स्थाई प्रस्तुति स्थल स्थायी तौर पर बनाये जाते है जिसे बनाने के बाद दोबारा हटाया नही जाता।

1. स्थायी रंगमंच :–

स्थायी रंगमंच के भेद – नाट्यशास्त्र में वर्णित नाट्यगृह जो आज विविध स्थानों में प्रेक्षागृह, कलामंदिर, सांस्कृतिक भवन, रंगमहल आदि के नाम से प्रसिद्व है। इनका निर्माण नाट्यशास्त्र में दिये गये निर्देशों के अनुसार ही सभी जगह मिलते है। एक भवन जिसके अंदर दर्शक दीर्घा भी होती है और समूचा रंगमंच भी। इनके आकार प्रकार की छोटे–बड़ै पाये जाते है। मुझे अभी तक जो विभिन्न नाट्यगृह देखने के सुयोग मिले है उनकी दर्शक दीर्घा की क्षमता के अनुसार श्रेणी निम्नानुसार है :–

1. सीताबेंगरा और जोगीमार गुफा
2. दरबार हॉल, इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय खैरागढ़
3. थियेटर विभाग, इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय खैरागढ़
4. बहुउद्देशीय सभागार, भिलाई होटल, भिलाई
5. रंग मंदिर, रायपुर
6. मानस भवन, दुर्ग
7. नेहरू सांस्कृतिक भवन सुपेला, भिलाई
8. नेहरू सांस्कृतिक भवन, सुपेला, भिलाई
9. राघवेन्द्र हॉल, बिलासपुर
10. भिलाई के विभिन्न सेक्टरों में निर्मित इस्पात क्लब
11. विभिन्न विद्यालयों, महाविद्यालयों के सभा भवन
12. सिनेमा हॉल के मंच जिसका उपयोग आवश्यकता अनुसार किया जाता है।
13. महाराष्ट्र भवन रायपुर, कालीबाड़ी रायपुर, मेडिकल कॉलेज रायपुर।

घिरे हुये नाट्यगृह के अलावा विभिन्न रंगमंच कई स्थानों में बने हुए है जो स्थायी तौर पर बनाये गये है लेकिन दर्शक दीर्घा खुले मैदान में है जहां आवश्यकता अनुसार बैठने की व्यवस्था कर ली जाती है। मुक्ताकाशी मंच

1. ओपन एयर थियेटर
2. स्थायी चबूतरा

मुक्ताकाशी मंच :– इसमें केवल चौकोर मंच ही होता है। लोहे के चार पाईप चार कोनो में लगे होते है, ताकि आवश्यकतानुसार अनुसार पर्दा लगाया जा सके साज सज्जा की जा सके यह उपर से और तीनो ओर से खुला होता है। पीछे की ओर कमरे होते है जहां कलाकार साज–सज्जा कर सकते है। तीनो ओर बैठने की व्यवस्था कार्यक्रम के दौरान की जाती है। अधिक भीड़ भाड़ वाले कार्यक्रम यहां होते है।

1. ओपन एयर थियेटर :– ओपन एयर थियेटर में रंगमंच नेपथ्य, साज सज्जा कक्ष सब बने होते है। मंच के अग्र भाग में पर्दा होता है। दर्शक दीर्घा में कार्यक्रम के दौरान दरी या कुर्सी की व्यवस्था कर ली जाती है। अधिक भीड़–भाड़ वाले नाटक के लिये इसका उपयोग होता है।

2. स्थायी चबूतरा :– निम्न आय वर्ग के निवासियों के मोहल्लों, गांव के सार्वजनिक स्थलों, शैक्षणिक संस्थानों के बनाये हुये ईंट सीमेंट के स्थायी चबूतरे होते है जिसमें आवश्यक व्यवस्था जोड़कर कार्यक्रम के अनुरूप मंच को बनाकर कार्यक्रम प्रस्तुत किये जाते है।

इसी प्रकार गांव में चौपाल, पंचायत भवन, ग्राम सभा भवन, ग्राम परिषद, ग्राम पंचायत, जिला पंचायत आदि के छोटे–बड़े आकार–प्रकार के मंच होते है जिनके मंचों से सरकारी कामकाज भी निपटाये जाते है। उच्च अधिकारी, मंत्री, विधायक व संबंधित लोग विभागीय अधिकारियों को संबोधित करते है। गोष्ठियां होती है। प्रशिक्षण दिये जाते है और समय–समय पर साक्षरता, पंचायती राज, सरकारी योजनाओं के प्रचार कार्य आदि से संबंधित नाटकीय, सांस्कृतिक प्रस्तुतियां प्रस्तुत की जाती है।

कहने का तात्पर्य यह है कि छोटे–बड़े सुविधाओं से परिपूर्ण सुविधाओं से वंचित अनेक आकार–प्रकार के मंच है जिन्हें अपने कार्यक्रम के अनुरूप बनाकर संबंधित लोग अपना कार्य सिद्ध करते है।

अस्थायी रंगमंच :–

अस्थायी मंच से तात्पर्य ऐसे मंच से है जो प्रदर्शन के पूर्व निर्मित किये जाते है और प्रदर्शनोपरान्त समाप्त कर दिये जाते है। ऐसे रंगमंच आयोजन के अनुरूप विस्तृत माध्यम और छोटे रूप में तैयार किये जाते है। इनमें भी भिन्न प्रकार के मंच पाये जाते है :–

1. भव्य कार्यक्रम के लिये मजबूत व सुविधायुक्त मंच पूर्व उल्लेखनीय चंदैनी गोंदा, सोहना विहान, चरणदास चोर जैसी छत्तीसगढ़ी लोकनाट्य के लिये अस्थायी किन्तु मजबूत मंचों की आवश्यकता होती थी। 50–60 कलाकारों वाले बड़े प्रदर्शन को अपने मंच में झेल सके ऐसे मंच ईंट सीमेंट से या मिट्टी से या लोहे के एंगल या लकड़ी से बनाये जाते है। तीनों ओर से खुले और उपरी तालपत्री लगे हुए उक्त मंच का आकार ''20 X 30'' कम से कम रहता है। सामने दर्शक दीर्घा पीछे आवश्यक व्यवस्थाओं की अस्थायी व्यवस्था की जाती है। गणेश उत्सव, दुर्गा उत्सव, मेला, मड़ई व विशेष समारोह पर भी अस्थायी मंच बनाने की परंपरा सदैव से रही है। यह मंच भी पर्याप्त लम्बे चौड़े और प्रदर्शन के अनुकूल हुआ करते है। प्रदर्शन के अनुकूल बड़े छोटे आकार के अस्थायी आकार के मंच बनाने की परंपरा छत्तीसगढ़ में सभी जगह है।

लोक रंगमंच :–

लोक नाट्य के संबंध में यह तो स्पष्ट रूप से कहा ही जा सकता है कि वह खुला होता है। कहीं भी दो चार तखत डालकर या किसी चौपाल के चबूतरों का ही उपयोग मंच के उपर में कर लिया जाता है। उसमें पर्दो का प्रयोग नही होता। दृश्य परिवर्तन की अपेक्षा न होने के

कारण पात्रों के प्रसाधन की पृथक कक्ष में या प्रेक्षागृह में व्यवस्था नही होती, लेकिन रंगमंच के संबंध में इतना ही विचार पर्याप्त नही।

''लोक रंगमंच के संबंध में डॉ. सत्येन्द्र ने कुछ संकेत मात्र किया है – रंगमंच के संबंध में जिन बातों पर ध्यान दिया जाता है उनका उन्होने उल्लेख मात्र किये ही है। वे निम्न प्रकार से है –

1. स्थान का अनुष्ठान
2. रंगमंच का स्वरूप
3. नेपथ्य का स्वरूप
4. रंगमंच की सज्जा
5. प्रकाश का विधान
6. वाद्य यंत्र
7. अभिनय प्रकाश
8. मूल मार्जन के साधन
9. आरंभ और उसकी शैली
10. अंत और उसकी शैली

सामान्यतः चाहे रास लीला हो या नौटंकी, स्वांग हो या रासलीला प्रायः रंगमंच के विषय में अधिक चिंता करना लोकनाट्य की प्रकृति के विरूद्ध है। फिर भी हमे उस रूप को एकदम उपेक्षा की दृष्टि से नही देखना चाहिए।

लोक रंगमंच और नागरिक रंगमंच में फर्क होता है। लोक के पास मनोरंजन के बने बनाये साधन नही होते वरन् मिट्टी में से अनाज

पैदा करने की तरह वे अपने सीमित संसाधनों में से ही अपना मनोरंजन करते आये है। आनंद उनके लिये वही बाहर से प्राप्त करने की वस्तु नही। वरन् जिस तरह श्रम से ही संगीत और कठोर पर्वत में से निर्मल जल के झरने झरते आये है उसी तरह से वे अपने जीवन में से आनंद प्राप्त कर लेते है।

''श्री जगदीश चंद्र माथुर के शब्दों में कहें तो लोक रंगमंच जन साधारण विशेषता देहाती जनता के दैनिक जीवन का एक रंग रहा है और सामाजिक उद्देश्यों का एक माध्यम। नागरिक रंगमंच वर्ग विशेष के मनोरंजन का साधन है न कि फुर्सत के क्षणों का मन बहलाव। लोक रंगमंच जीवन की उमंग की स्वाभाविक और अनायास अभिव्यक्ति है और नागरिक रंगमंच कलात्मक और चेष्टायुक्त अभिव्यक्ति है। इसलिये लोक रंगमंच सदा रहा है और रहेगा भी किन्तु नागरिक रंगमंच और साहित्यिक रंगमंच राजाओं और धनिक वर्ग के आश्रय अथवा व्यवसायिक परिस्थितियों पर निर्भर करता है और तदानुसार ही जीवित अथवा विलुप्त होता है। 10

''यहा रामनारायण उपाध्याय के विचार का दृष्टव्य है जो बड़े जोश खरोश के साथ देहाती रंगमंच की तैयारियां शुरू होती है। गांव के चौराहों पर एक खंभा डालकर उस पर तंबू तान दिया जाता है और चारो ओर की चार दिशाएं खुली हवा, खुले विचार और राह चलते दर्शकों के आने के लिये खुले छोड़ दिये जाते है। उक्त स्थान को पदों से बांधा नही जाता। इस कारण वहां पैसे अथवा टिकट की ओट नही होती।'' 11

गम्मत नाचा मंडली, पंडवानी, बांसगीत, भजन कीर्तन के लिय जो भी मंच बनते है उनके निर्माण काल में भी सांकेतिक तौर से प्रारंभिक कार्यवाही की जाती है जिसमें सबसे पहले अगरबत्ती जलाकर, नारियल फोड़कर मंगलदीप प्रज्वलित करके बड़ी श्रद्धा के साथ मंच पूजा सम्पन्न

---

(10) माथुर जगदीशचन्द्र, चौमासा पत्रिका, अंक 34, वर्ष 1996 पृष्ठ क्र. 101

(11) उपाध्याय रामनारायण, चौमासा पत्रिका, अंक 34, वर्ष 1996

किया जाता है। इस भांति हम देखते है कि भरतमुनि के निर्देशों के अनुपालन में लोक रंगमंच के निर्देशक, व्यवस्थापक जागरूक कराते है और भावी अनदेखी बाधाओ, विपत्तियों से मंच की रक्षा कर लेते है। ''लोक रंगमंचों छत्तीसगढ़ी साहित्यकार डॉ. विमल कुमार पाठक ने शास्त्र विधान के बातक अपने अनुभव को लिपिबद्ध किया है जिसमें बताया गया है मंच निर्माण के पूर्व प्रायः हर मंच निर्माता चाहे वह स्थायी मंच बनवा रहा हो चाहे अस्थायी यह जानता है कि कुदाली चलाने के पहले उस भूमि की पूजा की जानी चाहिए। भले ही पूर्ण विधि विधान से पंडित को बुलाकर पूजा न करायी जाये लेकिन स्वच्छ पानी, पीला अक्षत, फूल, अगरबत्ती, दीपक, नारियल और प्रसाद की व्यवस्था की ही जाती है। जिस भूमि में मंच खड़ा किया जाता है उसकी प्जा किसी एक मुख्य प्रमुख व्यक्ति के द्वारा की जाती है। अगरबत्ती जलाकर उस भूमि विशेष की आरती उतारी जाती है। मंगल कामना की जाती है। मंच के निर्माण में विध्न न उत्पन्न हो यह प्रार्थना की जाती है और उपस्थित लोगों को नारियल का प्रसाद दिया जाता है।'' 12

''छत्तीसगढ़ लोक रंगमंच पर डॉ. विमल कुमार पाठक का मत इस प्रकार है – प्रत्येक मंच बड़ी पवित्रता लिये होता है। मंचों के निर्माण और उपयोग की अवधि में बकायदे मंच पूजा की जाती है। मंच को गरिमा प्रदान की जाती है और तत्पश्चात् कार्यक्रम प्रारंभ किया जाता है। मां सरस्वती, गणेश जी, श्री कृष्ण जी, राम जी, हनुमान जी की वंदना की जाती है तथा घोषित कार्यक्रम प्रारंभ होता है। महाभारत की कथा कहने वाले महर्षि वेदव्यास की स्मृति में आज भी कथा प्रस्तुत करने वाले जहां बैठते है, वह व्यास गद्दी कहलाती है। महाभारत पुराण, महाभारत, रामायण कहने वाले पंडित, पुरानिकों के बैठने की जगह व्यास गद्दी होती है और उसमें नीचे अपना जनता जो दर्शक श्रोता होते है बैठते है।

---

(12) डॉ. पाठक विमल कुमार, छत्तीसगढ़ पर्व के गौरव पत्र से दीपावली विशेषांक 90 से उद्धत

पंडवानी, रामायण, भर्तहरो, चंदैनी, देवारगाथा, बांसगीत, रहस, रामलीला, गम्मत, नाचा, नाटक, लोकनृत्य, प्रहसन, लोक संगीत आदि कार्यक्रम प्रस्तुत करने वाले किसी भी जाति के कलाकार को व्यास गद्दी पर आसीन होने व दर्शक श्रोताओं को जमीन पर किन्तु मंच से नीचे बैठने की व्यवस्था प्रदान की जाती है।'' 13

''अपनी नयी कृत चंदैनी गोंदा की मंच व्यवस्था का जिक्र करते हुए देशमुख जी लिखते है – पहले नाचा एक जमीन के तल पर बिना मंच के खुले आसमान के नीचे हुआ करता था। फिर उसके गौरव में सिर्फ चार खम्बे और टट्टे लगे होते थे और वही गीतों भरी रात अब विशाल भव्य शामियानों, जगमगाती रौशनियों के बीच साढ़े पांच फुट उंचे मंच पर प्रस्तुत हो रही है। धरती से साढे पांच फिट उंचे पूरे एक आदमी की उंचाई में उठकर अपनी अपेक्षित हेय धरती से अपनी पूरी मानवीय उंचाई में उठकर वह पुरानी रात अब चंदैनी गोंदा बन गयी थी।'' 14

लोकनाट्य में रंगमंच की रचना प्रायः सहज और सरल ही होती है। गांव का चौराहा या चौपाल जहां गलियों व सड़कों पर खुली जगह में दर्शक आराम से बैठ जाये बस वही लोकनाट्य का मंच बन गया। बीच में या आजू–बाजू खम्भा गड़ाकर चंदैनी पाल अथवा चंदवा तान दिया जाता है। लोक रंगमंच में किसी प्रकार की यवनिका की आवश्यकता नही पड़ती।

पंडवानी का मंच

यूं ही कहीं पर भी पाल तानकर पंडवानी शुरू कर दिया जाता था चाहे वह बीच गली हो, बड़ा सा आंगन हो या कठोर, बारी, चौरा, गूड़ी, कहीं भी पंडवानी के कलाकार पूरे आत्म विश्वास से प्रस्तुति दिया करते थे। यह कहा जा सकता है, कि पंडवानी के आरंभिक काल में स्थान

---

(13) डॉ. पाठक विमल कुमार, छत्तीसगढ़ पर्व के गौरव पत्र से दीपावली विशेषांक 90 से उद्धत

(14) देशमुख रामचन्द्र, चन्दैनी गोंदा, स्मारिका, पृष्ठ क्र. 8

विशेष का कोई महत्व नही था। यह स्थान ऐसा हो जहां चारो ओर दर्शक बैठकर पंडवानी का आनंद उठा सके पंडवानी के मंच के लिए विशेष प्रकार के मंच की भी कोई आवश्यकता नही थी। मशाल की रोशनी में भी पंडवानी होता था, समय के अंतराल के साथ पंडवानी के मंच विधान में कुछ–कुछ परिवर्तन आया। अब चारो ओर से खुला न रहकर एकतरफा पाल अथवा बैनर लगने लगे जो पंडवानी के मंच विकास का एक नया आयाम था, ज्यादा ताम–झाम तो नही आया लेकिन मंच का परिवेश जरूर परिवर्तित होता था आजू–बाजू और सामने दर्शक दीर्घा बन गए और चौथा हिस्सा संगतकारों के लिए पूरी तरह स्थायी हो गया। परदे के पीछे की जगह को मेकअप रूम की तरह इस्तेमाल किया जाने लगा हां मंच पर अब तखत पर बैठकर संगतकार बाजा बजाते पंडवानी कलाकार जमीन पर पंडवानी प्रस्तुत करते थे। पहले तो संगतकार कोदो या धान पैरा (धान का गठ्ठा) पर बिठाकर संगीत सुनाया करते थे।

यह सच है कि पंडवानी के मंच में समय अनुसार परिवर्तन होता रहा उन दिनों मंच में प्रकाश व्यवस्था के लिए (मशाल) भपका का प्रचलन था, बांस की पोंगी में पुराने कपडे की बत्ती बनाकर मिट्टी के तेल डालकर मशाल जलाया जाता था। मशाल से मंच पर रोशनी की जाती थी समय के साथ और परिवर्तन आया टिमटिमाते लैम्पों की जगह पैट्रोमैक्स गैस का प्रचलन हुआ प्रस्तुति के दौरान उस समय दो–तीन पैट्रोमैक्स जलते थे, बीच–बीच में आवश्यकतानुसार गैस लाइट को कम ज्यादा किया जाता था इससे लोग आकर्षित होते थे।

जैसे–जैसे पंडवानी की लोकप्रियता बढ़ती गयी उसका मंच विधान भी विस्तारित होता गया, पंडवानी का आयोजन नगरों, शहरों में किया जाने लगा। वर्तमान में पंडवानी अच्छे बड़े मंचो पर प्रदर्शित होन लगी। पंडवानी के प्रति लोगों का रूझान बढ़ा और पंडवानी मंडलियां अपने

को संवारने जुट गयी। आधुनिक किस्म के मंचों पर पंडवानी को प्रवेश मिल गया।

पंडवानी का प्रदर्शन देश–विदेश में हो रहा है, अपनी प्रस्तुतियों से सार्थकता को अभिव्यक्ति दे रहा है। मंच चाहे ओपन थियेटर वाला हो, प्रोसीनियम हो चाहे कोई सांस्कृतिक सदन अथवा नाट्य गृह पंडवानी को किसी भी मंच से परहेज नही है, लेकिन पंडवानी के अस्तित्व के अक्षुण बनाये रखने के लिए इसके मंच परियोजना पर विशेष ध्यान रखना जरूरी है।

———000———

अध्याय – 3

पंडवानी लोकगाथा में नाटकीय तत्व

(1) कथोपकथन

(2) पात्र

(3) अभिनय

(4) रस

कथोपकथन :–

संवादों के माध्यम से पात्र अपनी बात रखता है संवाद से ही कथानक आगे बढ़ता है। संवाद कथावस्तु को सार्थकता देने के साथ–साथ कथानक को गति देता है, चरित्रों की जटिलता को उद्वरित करना और जीवन के गहरे अभिप्राय को प्रकाशित करने का कार्य करता है। किसी भी कथानक में वार्तालाप जितना अधिक हो और लेखक की कलम से जितना ही कम लिखा जाए, उतना ही कथानक सुन्दर होगा। वार्तालाप केवल रस्सी नहीं होनाा चाहिए इन सभी बातो को ध्यान देना चाहिए।

प्रस्तुति को व्यापक रूप देने में कथोपकथन का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान होता है। प्रस्तुति के कलेवर का निर्माण करने वाला मूल तत्व संवाद है। सच तो यह है कि संवाद किसी भी प्रस्तुति प्रारूप के प्राण है। कथानक चरित्र–चित्रण उद्देश्य आदि समस्त तत्वों का रूपायन, संवाद के माध्यम से ही होता है, पंडवानी वैसे तो गेय प्रधान है मगर उसमें भी नाटक की तरह संवाद योजना देखने को मिलता है।

संवाद भाषा रूप में सम्प्रेषण का सर्वश्रेष्ठ तत्व है। निर्मला हेमत ने इस सन्दर्भ में लिखा है।''नाटक के पात्रों का परस्पर संवाद नाट्य वस्तु तथा चरित्रों के विकास का प्रमुख साधक होता है। कथोपकथन नाटकीय क्रियाकलाप का अपरिहार्य अंग है और उसका दायित्व कहानी अथवा उपन्यास के संवादों से कही अधिक है।'' 1 इसी प्रकार पंडवानी कलाकार अपनी प्रस्तुति में अनावश्यक विस्तारपूर्ण संवाद नही लेते है। संवाद को लेकर कथाकार को बहुत सजक रहना पड़ता है क्योंकि संवाद वातानुकूल सही भाव को संप्रेषित करने वाला शुद्ध उच्चारण एवं उचित लय का होना आवश्यक है तभी वह अधिक प्रभावी बन सकता है।

---

(1) डॉ. हेमंत निर्मला, आधुनिक हिंदी नाटककारों के नाट्य सिद्धान्त, पृ. क्र. 46

कथोपकथन सहज एवं सरल होने चाहिए। ऐसे ही शब्द रचना पंडवानी की प्रस्तुति में होने से दर्शक आनंद की अनुभूति कर पाते है। पं.राधेश्याम कथावाचक के मत अनुसार–''भाषा चमकदार होते हुए भी सरल इतनी हो कि पात्र के मुख से वाक्य निकलते ही जनता उसे समझ ले। संवाद ही नाटकी की बड़ी कुंजी कहलाती है।'' 2 जिस प्रकार नाटक में संवाद का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है उसी प्रकार पंडवानी में संवाद–योजना जरूरी है संवाद के सन्दर्भ में गाथाकार को इस बात पर अधिक ध्यान देना होता है कि प्रयुक्त संवादों का स्वरूप पात्रों के देश–काल और वय आदि के अनुरूप हो क्योंकि पंडवानी मौखिक परम्परा से उपजा हुआ है तथा प्रस्तुतकर्ता के प्रस्तुति अनुभव और कथानक को लेकर उसकी समझ ही संवाद का सही चुनाव में सहायक होता है। संवाद से ही पंडवानी के पात्र–परिचय और कथानक का विकास संभव है इस सन्दर्भ में गिरीश रस्तोगी ने कहा है – ''नाटक की सम्पूर्ण कथा का विकास पत्रों का चरित्र–चित्रण, उद्देश्य प्राप्ति, देशकाल आदि का ज्ञान ''संवादो'' के माध्यम से होता है।'' 3

पंडवानी की प्रस्तुति शैली का आधार संकेत वाक्य है। संकेत वाक्यों से संवाद रचना किया जाता है कथाकार पद्य को गद्य के माध्यम से कथा को गति प्रदान करता है। पंडवानी में अधिकांश संवाद लघु एवं मध्य आकार में प्रयोग किया जाता है, लम्बे आकार के संवादो की संख्या बहुत कम देखने को मिलती है। पंडवानी में ग्रामीण, दासियों, सैनिकों और कुछ दैत्यों क संवाद प्रायः छोटे है जबकि कुछ विशेष प्रसंग के प्रस्तुति में नायक के संवाद अधिक लम्बे होते है। जैसे–कृष्ण और अर्जुन संवाद, भीम और दुर्योधन के संवाद अधिक लम्बे है।

---

(2) पं. कथावाचक राधेश्याम, मेरा नाटक काल, पृ. क्र. 304

(3) रस्तोगी गिरोश, हिन्दी नाटक सिद्वान्त और विवेचना
पृ. क्र. 122

पंडवानी के संवाद सिर्फ कार्य–व्यापार में ही सहायक नहीं है अपितु यहाँ संवादों की गुणवत्ता भी उच्चस्तरीय है संवाद में विद्यमान संक्षिप्तता, स्वाभविकता एवं व्यंग्यात्मकता की त्रिवेणी ने उसे अधिक आकर्षक एवं महत्वपूर्ण बना दिया है।

पंडवानी अलिखित लोक गाथा है और इसका प्रमाणिक मूलपाठ अनुपलब्ध है जिसकी भविष्य में उपलब्धता की सम्भावना भी नही है इसी लिए प्रत्येक कलाकार की संवाद योजना अलग–अलग होती है, एक ही पंडवानी गायक के एक ही कथा–प्रसंग में भिन्नता सहज रूप से दिखाई पड़ती है।

पंडवानी कलाकारों की संवाद योजना निम्नानुसार है :–

<u>श्री झाडू राम देवांगन</u> :–

श्री झाडू राम देवांगन वेदमती शैली के पंडवानी गायक है वेदमती शैली का गायन उनकी पंडवानी की विशिष्टता है अपने संवाद–योजना की प्रमाणिकता के लिए दोहों चौपाइयों का समावश भी करते है।

रथ के आवाज होथे गुरू द्रोणाचार्य कथे–वह
कोने वीर येहा आवत हवे भाई
सात्यकी ल देखन लागे ग मोर भाई
सात्यकी ल देख के गुरू द्रोणाचार्य कथे कस सात्यकी
जेहि मग अर्जुन सके न जावा,
चाहत गगन उड़ावन धावा।
अर्जुन के मोला जीते के हिम्मत नई होईस अउ तैं मोला फटाफट मारथस।

श्री झाडू राम जी के पंडवानी गायन में संवाद योजना के साथ विभिन्न लोक धुनों का समाहार मिलता है। इस कारण पंडवानी कर्ण प्रिय और रोचक लगती है। प्रसंगों की व्याख्या बड़े सहज और सरल ढंग से करना उनकी विशेषता है।

पूना राम निषाद :–

महाभारत की कथाओं को आंचलिक संस्कृति के अनुरूप प्रस्तुत करना पूना राम निषाद की विशेषता है। ये भी बीच–बीच में दोहों और चौपाईयों का गायन करते है –

इनके प्रस्तुति के कुछ संवाद :–

''आज राजा दुर्योधन हा बोलन लागे भाई,
भईया तुम्हार विचार का हवे गा मोर भाई।
तब शकुनी कथे दुर्योधन हमर परम हितैषी जतेक राजा है–
सबला निमंत्रण देई ग देव भईया,
सब ला नेवता देइग देवव भईया
करण, दुशासन, सबके सब बोले लागिन तब दुर्योधन
लिख–लिख निमंत्रण भेजने लागे भाई
दुतरक हाथ म देवन लागे भाइ।

ऋतु वर्मा :–

जिस तरह बाकी पंडवानी कलाकार सरलता और सहजता संवाद योजना रचते है, उसी तरह ऋतु वर्मा बालपन से ही पंडवानी की प्रस्तुति देती आ रही है। रितु वर्मा वेदमती शाखा के प्रमुख कथाकारों में से एक है।

<u>संवाद</u> –

धीरे धीरे ग खींचय
आराम से साड़ी खीचं लागिस
ये दे खीचन लागय।

मीना बाई साहू :–

मीना बाई साहू और रागी श्री राधेश्याम साहू का योगदान भ्झी सराहनीय है, जो एक विशेष अंदाज से रागी का काम करते है स्थानी परिवेश और लोक रंग में रंगी इनकी पंडवानी प्रस्तुति का निम्न अंश दृष्टव्य है

संवाद –

दस हजार हाथी के ताकत से भिमसन खम्भा हाले न डोले
त गदा रे उठाय भीम अगा मारन लागे न
त खम्भा ल तोरे

खम्हन लाल अस्तुर :–

खम्हन लाल अस्तुरे विभिन्न लोक गीतों व धुनों को पंडवानी में शामिल करके गाते है। यह इनकी विशिष्टता है, इनके संवादो का आरोह–अवरोह दर्शकों को सम्मोहक लगता है। यह अपने संवादों को समय युगीन घटनाओं से जोडकर प्रस्तुत करते है।

स्पष्ट है पंडवानी के संवाद देश के बाकी लोकगाथाओं में उपलब्ध संख्या, गुणवत्ता, स्वाभाविकता तथा व्यंग्यात्मकता सभी दृष्टि से श्रेष्ठ एवं विषय सम्मत है।

पात्र

लोकगाथा, कहानी और नाटक के लिए पात्र एक अनिवार्य तत्व है, ''पात्र वस्तु विन्यास के सजीव संचालक होते है। इस कारण जब तक वस्तु योजना और चरित्र सम्बधद् नही होते तब तक इसका प्रसार नही हो पाता।''4 नाटकीय वस्तु में प्रेषणीयता होने के कारण पात्र लोकगाथा पण्डवानी के स्थाई अंग होते है चूँकि कथा बिना पात्रों के असम्भव है,

---

(4) डॉ. क्रांतिमलि, हिन्दी नाटकों की शिल्पविधि का विकास पृ. क्र. 518

अतः पात्रों के माध्यम से ही पण्डवानी कलाकार अपनी बात दर्शकों तक पहुँचाता है। डॉ. नीलिमा शर्मा के मतानुसार– ''नाटक को वस्तु में घटना और कार्यव्यापार का समाहार होता है। उन नाटकों के झेलने और कार्यव्यापार में जीने का काम पात्र करते है, और प्रमुखता के आधार पर उन्हीं पात्रों में विशिष्ट चरित्र उभरते है।'' 5 लोकगाथा हो या नाटक दोनो की विषय वस्तु एक दूसरे के पूरक है। सत्य तो यही है कि ''पात्र'' पण्डवानी की प्राण है, इसलिए चरित्र का सशक्त एवं प्रभावी होना आवश्यक है। नेमिचंद जैन के मतानुसार ''पात्र एक ओर साधन है, तो दूसरी ओर साध्य भी। अर्थात जहाँ एक ओर पात्रों के क्रियात्मक द्यात–प्रतिद्यात व टकराहट से कथावस्तु गतिशील होकर उछिष्ट प्रभाव की पात्र होती है, वहा दूसरी ओर वस्तुजन्य स्थितियों से पात्रों का चरित्र निर्मित और प्रकाशित होता है।'' 6

पण्डवानी के कथा प्रवाह में योग देने वाले प्रमुख पात्रों को पण्डवानी कलाकार अपनी योग्यता और अनुभव के अनुसार उनका साकार रूप प्रस्तुत करते है, इस शोध कार्य में उन्ही पात्रों की चर्चा की गई है जो निम्नानुसार है –

श्री कृष्ण :–

महाभारत में हमे श्री कृष्ण भगवान का एक अलग ही व्यक्तित्व देखने को मिलता है। वे साधारण मानव ना होकर पूर्णतम पुरूषोत्तम भगवान नारायण के ही अवतार है। महाभारत हो या पाण्डवानी सारे पात्रों में श्री कृष्ण भगवान की अलग ही छवि है। महाभारत का प्रत्येक पात्र चाहे वह कौरव हो या पाण्डव अपने आप में ही इनकी महत्वपूर्ण भूमिका है। नायकत्व की दृष्टि से देखने पर उनमें प्रसंगानुसार सारे गुण मौजूद है।

---

(5) डॉ. शर्मा नीलिमा, साठोत्तरी हिन्दी नाटक, पृ. क्र. 357

(6) जैन नेमीचंद, रंगदर्शन, पृ. क्र. 21

महाभारत में श्रीकृष्ण की भूमिका एक सूत्रधार के रूप में देखने को मिलती है, उनकी श्रेष्ठता महाभारत के राजसूय यज्ञ प्रसंग में भीष्म पितामह के इस कथन से सिद्ध होती है मैं तो भू–मंडल पर श्री कृष्ण को ही प्रथम पूजा के योग्य समझता हूँ।

''कृष्ण एव हि लोकानामुत्पत्तिरपि चाप्ययः।
कृष्णस्य हिकृते विश्वमिदं भूतं चराचरम।।
एष प्रकृतिख्यक्ता कर्ता चैव सनातनः।
परश्च सर्वभूतेभ्यस्तस्मात, पूज्यतमो हरिः।।'' 7

भीष्म पितामह :–

भीष्म पितामह महाभारत व पंडवानी के सर्वाधिक महत्वपूर्ण पात्र है। कुरूवंशी महाराज शान्तनु के पुत्र भीष्म गंगादेवी से उत्पन्न हुए थे। बाल्यकाल में इनका नाम देवव्रत था।

मोर ओही समे के बेरा मोर बोलन लागे भाई
हाँ देवी हाँ; एक बच्चा के मोला बहुत जरूरत है। गंगा देवता के लोक चलेगे। राजा सान्तनु ये लइका ल मांगत हे – लइका के नांव है ''देवव्रत।

संपूर्ण महाभारत में भीष्म पितामक का उदात्त चरित्र मिलता है। जिस राज्य के लिए उनकी ही उपस्थिति में उनकी ही पीढ़ी में भयंकर नर संहार हुआ, उसी राज्य को उन्होने अपने पिता श्री की मामूली सी इच्छा के लिए परित्याग कर दिया। काशी राज की तीन कन्याओं का अपने भाई विचित्रवीर्य के लिए हरण कर अंबा को ठुकरा दिया।

''तीनो कन्या हस्तिनापुर लावय भईया जी
लाके मँडवा म खड़ा करे भाई।''

युधिष्ठिर :–

पाँचो पाण्डवों में सबसे बडे भाई युधिष्ठिर है, ये साक्षात धर्मराज के अंश है, तथा उच्च कोटि के महापुरूष भी। पिता पण्डु की मृत्यु

---

(7) महाभारत, गीताप्रेस गोरखपुर, श्लोक क्र. 23,24, पृ. क्र. 780

के पश्चात् अपने ज्येष्ठ पिता धृतराष्ट्र के संरक्षण में युधिष्ठिर ने अपने भाइयों का नेतृत्व कर उचित मार्गदर्शन भी दिया पांचो भाई एकता के सूत्र में बंधे हुए थे। युधिष्ठिर ने अपने भाइयों व द्रोपदी का साथ निभाते हुए बारह वर्ष का वनवास व एक वर्ष का अज्ञातवास भी व्यतीत किया। इन्होने कभी भी धर्म का परित्याग नही किया सदैव धर्म व सत्य की रक्षा हेतु अडिग रहे। शकुनि ने उन्हें जुएँ में हराकर छलकपट पूर्वक उनसे सब कुछ जीत लिया और सभा सदों के बीच पाण्डव पत्नि द्रोपदी का अपमान भी किया इतना होने पर भी युधिष्ठिर ने धर्म के निर्वाह के लिए र्निविरोध सब कुछ चुपचाप सह लिया। इनके हृदय में सबके लिए सदा समता भाव ही रहता था, ये अजात शत्रु होने के साथ–साथ सत्यवादी भी थे।

अर्जुन :–

नायकत्व की दृष्टि से अर्जुन महाभारत के नायक है, ये श्रीकृष्ण के सखा, परम भक्त तथा अनुगामी थे, ये पराक्रमी व क्षत्रिय योद्धा भी थे। इनकी वीरता और पराक्रम के अनेक प्रसंग पण्डवानी में देखने को मिलते है, भले ही युधिष्ठिर भाइयों में बड़े हैं, किन्तु अर्जुन पराक्रम की दृष्टि से श्रेष्ठ माने जाते है चाहे वह गुरू द्रोणाचार्य द्वारा आयोजित पक्षी के नेत्र भेदन की परीक्षा हो या द्रोपदी स्वयंवर या अन्य प्रसंग। अर्जुन श्रीकृष्ण के अत्यंत प्रिय थे यही कारण है कि बलराम के न चाहने पर भी श्री कृष्ण ने अपनी बहन सुभद्रा का विवाह अर्जुन से किया :–

जयद्रथ वध प्रसंग से लिया गया श्लोक –

''बड़े बड़े बाण अर्जुन तब लीन्हे
अउ बाण के बरसा होवन लागी।'' 8

भीम :–

महाभारत का पात्र भीम पण्डवानी का नायक है। पण्डवानी भीम के अचरज भरे कारनामों, उसकी अदभुत वीरता और पराक्रमों से परिपूर्ण है। संभव हे कि पण्डवानी में आंचलिकता व परिवेशगत वैशिष्ट्य

———————————

(8) महावर निरंजन, पंडवानी, महाभारत की एक लोक नाट्य शैली, पृ. क्र. 99

हो, अर्जुन जैसे महावीर के पश्चात् पांडवो के पक्ष में भीम की ही प्रमुखता है। पण्डवानी में भीम को भीमसन के नाम से पुकारा जाता है जो उसके विशालकाय शरीर और अदम्य बल का परिचायक है।

अगा भीमसन बली दऊड़े भइया
तब दोनो के माते लडाई भइया

पांडव भीम अऊ हिडिम्ब गदा युद्ध बर तैयार होगे दोनो मारा के मारी होवन लगे भईया।

<u>कुंती</u> :–

कुंती पितृ स्नेह से वंचित बाल्यकाल में ही राजा भोज की गोद पुत्री थी कुंती ने पीड़ा और त्याग का जीवन व्यतीत किया, यह वसुदेव की बहन श्रीकृष्ण की बुआ और पाण्डवों की माता थी।

<u>द्रोपदी</u> :–

यह पाण्डवों की पत्नि व महाभारत की नायिका है। महाभारत का युद्ध द्रोपदी के ही कारण हुआ था ऐसा कहना अत्युक्ति न होगा। महाभारत में युद्ध के तीन मूल कारणों जर, जोरू और जमीन में यह भी एक कारण है। द्रोपदी को पाण्डवानी में दुरपती कहा जाता है इनका एक और नाम 'पांचाली' भी है जो पण्डवानी में समान रूप से आता है, पांचाल देश की पुत्री हाने के कारण इनका नाम पांचाली पडा।

<u>गंधारी</u> :–

गंधार नरेश सुबल की पुत्री और शकुनि की बहन थी। विवाह के समय जब इन्हे मालूम हुआ कि इनके पति धृतराष्ट्र नेत्रहीन है तभी से गंधारी ने अपनी आँखों पर पट्टी बांध ली थी। गंधारी बड़ी निर्भिक और न्यायप्रिय थी। इन्होने सदा सत्य, नीति और धर्म का पक्ष लिया अन्याय का कभी समर्थन नही किया। महाभारत युद्ध समाप्ति और युधिष्ठिर के राज्याभिषेक के पश्चात् गंधारी अपने पति के साथ वन को चली गयी और

तपस्वी जीवन बिताकर पति के साथ ही दावाग्नि में जलकर अपने प्राण त्याग दिए।

दुर्योधन :–

दुर्योधन कौरवों में सबसे बड़ा भाई और धृतराष्ट्र का पुत्र था। दुर्योधन बचपन से ही जिद्दी, दुष्ट और अहंकारी था। पाण्डवों से इसकी कभी नही बनी। भीम को मारने के लिए इसने अनेक प्रयास किए पर अन्त तक सफल नही हो पाया। छल–कपट कर शकुनि मामा के साथ मिलकर दुर्योधन ने पाण्डवों को सर्वस्व जीत लिया साथ ही द्रोपदी को बीच सभा में अपमानित भी किया। दुर्योधन की हठ धर्मिता के कारण अठ्ठारह दिनों तक घोर महाभारत युद्ध हुआ, उसकी हठधर्मिता ही कौरव वंश के नाश का कारण भी बनी। अंत में वह स्वयं पण्डवानो के नायक भीम के हाथों गदायुद्ध में मारा गया।

कर्ण :–

कर्ण कुन्ती का पुत्र था, अविवाहिता कुन्ती ने लोकलाज के भय से उसे गंगा में बहा दिया था। अधिरथ और राधा ने कर्ण को पाल–पोसकर बड़ा किया। कर्ण दुर्योधन का मित्र था। द्रोणाचार्य की मृत्यु के पश्चात् दर्योधन ने कर्ण को कौरवों का सेनापति नियुक्त किया। युद्ध क्षेत्र में पाण्डवों की सेना का संहार किया। वचनबद्ध होने के कारण उसने अपनी माता कुंती को अर्जुन की रक्षा की दृष्टि से पाशुपत अस्त्र दे दिया। इन्होने साधू भेष में आए इन्द्र देव को भी कवच और कुण्डल दान में दे दिया। इनकी दानवीरता के कारण सभी कर्ण को ''दानवीर कर्ण'' के नाम से पहचानते थे।

पण्डवानी लोकगाथा विषयवस्तु की दृष्टि से जितनी विस्तृत है पात्रों की दृष्टि से उतनी ही विशाल। महाकाव्य में नाटक और कहानी की अपेक्षा पात्रों की संख्या अधिक होती है। कथानक की सम्पूर्ण घटनाओं का क्रम पात्रों द्वारा ही संचालित होता है। उसी तरह महाभारत कथाओं का

महासागर है जिसमें अनगिनत पात्र हैं कुछ प्रमुख पात्र तथा कुछ गौण पात्र के रूप में सामने आते है। पण्डवानी के पात्र शोध का विषय हो सकता है, अतः यहाँ उन्ही पात्रों की चर्चा की गई है, जिन्हें पण्डवानी कलाकार प्रमुखता के साथ दर्शकों के समक्ष प्रस्तुत करते है।

अभिनय :–

किसी कलाकार द्वारा प्रस्तुत किया जाने वाला वह कार्य जिसमें किसी कथा के अनुसार पात्र की भूमिका को अभिनीत किया जाता है अभिनय कहलाता है। अभिनय प्रस्तुत करते अभिनेता या अभिनेत्री जब प्रसिद्ध पौराणिक या कल्पित कथा के आधार पर रचित रूपक के निर्दिष्ट संवाद और क्रिया के अनुसार अपनी वाणी, शारीरिक चेष्टा, भाव–भंगिमा, मुख मुद्रा, वेशभूषा के द्वारा दर्शकों को शब्दों के भाव अर्थ का बोध और रस की अनुभूति कराते है, तब उस सम्पूर्ण समन्वित क्रिया को अभिनय कहते है।

भरत मुनि के नाट्यशास्त्र में अभिनय की परिभाषा सहित उसके चार प्रकारों का वर्णन हमें देखने को मिलता है।

अभिनय के चार प्रकार :–

1. आंगिक अभिनय
2. वाचिक अभिनय
3. आहार्य अभिनय
4. सात्विक अभिनय

भरत मुनि द्वारा उल्लेखनीय इन चारों अभिनय तत्वों को आधार मानकर पण्डवानी के अभिनय पक्ष का अध्ययन किया गया है।

अभिनय पंडवानी

आंगिक अभिनय :–

''तत्र आङि.गकोऽडै.निदर्शितः।''9

आंगिक अभिनय जिसमें अभिनेता अपने शारीरिक चेष्टाओं के माध्यम से दृश्यों को प्रतिबिम्बित करता है, आंगिक अभिनय कहलाता है। नाट्य शास्त्र में भरत मुनि ने आंगिक अभिनय के तीन भेद बतलाये है –

1. अंग 2. उपांग 3. प्रत्यंग

उदाहरण –

अंग – सिर, हाथ, छाती, बगले, कमर तथा पांव

उपांग – दृष्टि,भौं,पुतली,कपोल,नाक,अधर,ठोड़ी,मुंह,अंगुली,हथली,तथा तलवे

प्रत्यंग – कंधे, बाहु, पीठ, पेट, उरू और जांघ

पं. सीताराम चतुर्वेदी के अनुसार ''जब किसी प्रसिद्ध या कल्पित कथा के आधार पर कोई नाट्यकार किसी रूपक की रचना कर देता है, और उसमें निर्देशित संवाद तथा क्रिया के अनुसार जब किसी नाट्य प्रयोक्ता के द्वारा सिखलाये जाने पर या स्वयं नट अपनी वाणी, शारीरिक चेष्टा, भाव–भंगिमा, मुख–मुद्रा तथा वेशभूषा के द्वारा नाटक में आये हुए संवाद और रंग निर्देशक के भावों का दर्शकों को परिज्ञान और उनकी अनुभूति कराते है तब अभिनेता के उस सम्पूर्ण समन्वित व्यापार को अभिनय कहते है।'' 10 पद अवस्था प्रकृति और भाव की दृष्टि से छः प्रकार की गतियों में अभिनय होता है। अत्यंत करूण में स्तब्ध गति, शांति में मंद गति, श्रृंगार, हास्य व वीभत्स में साधारण, वीर में द्रुत गति रौद्र में वेगपूर्ण और भय में अति वेगपूर्ण हाती है।

---

(9) गैरोला वाचस्पति, भारतीय नाट्य परम्परा और अभिनय दर्पण पृ. क्र. 200

(10) पं. चतुर्वेदी सीताराम, भारतीय तथा पाश्चात्य रंगमंच पृ. क्र

प्रस्तुति को जीवन्त बनाने के लिए लोक गाथाओं में आंगिक चेष्टाओं का प्रयोग किया जाता रहा है, इस सन्दर्भ में डॉ. योगेन्द्र चौबे का मत है– ''भले ही इन कलाकारों को शास्त्र का ज्ञान नही है, लेकिन भरत ने जो विवेचन आंगिक अभिनय का किया है वह इन्हें सहज रूप से प्राप्त है। लोकगाथा गायक आंगिक अभिनय के जितने भी लक्षण है, अनजाने में उन सभी का अर्थात शरोर, मुखज तथा चेष्टाकृत अभिनय में पारंगत होता है, जब लोक गाथा गायक कथा का गायन करते–करते किसी चरित्र को क्षण भर के लिए जीने लगता है, तब गायक के हाथ–पैर आंख, मुख, मुद्राएँ देखते ही बनती है। 11

भाव – वाणी, मुखराम, अंग तथा सत्व के अभिनय द्वारा नाट्य रचनाकार के अंतर्गत इष्ट भावों का भावन करवाने के कारण यह ''भाव'' कहलाता है। पंडवानी में बैठकर तो कुछ खड़े होकर कथा प्रस्तुत करते है मगर जो बैठकर गाते है उन्हें भाव अभिनय में पारंगत होना अनिवार्य लगता है। स्व. झाडू राम देवांगन भाव अभिनय के श्रेष्ट कलाकारों में से एक है यह बैठकर अपनी प्रस्तुति देते थे। ''श्री झाडू राम देवांगन में अभिनय की असाधारण क्षमता देखने को मिलता है। कभी वे भीम की भूमिका में आक्रोश में लाल–लाल आँखे कर, मुख फुलाकर विरोचित ललकार की मुद्रा में तनकर बैठ जाते है और पल भर मं श्री कृष्ण की भूमिका में अधरों पर रहस्यमयी मुस्कान आ जाती है। कूटनीतिज्ञ भाव दर्शाने हेतु उनके नेत्र के पल–पल बदलते तेवर देखकर स्तब्ध रह जाना पड़ता है। इनके तुरंत बाद अगले ही क्षण दुःशासन के रक्त में बाल धोती हुई द्रोपती के आत्म–संतोष को भी वे अपने चेहरे के भावों से व्यक्त करते है। श्री झाडूराम देवांगन का अभिनय शारीरिक मुद्राओं की अपेक्षा चेहरे के भाव–भंगिमाओं पर अधिक निर्भर करता है। श्री देवांगन नौ रसों का प्रदर्शन केवल अपनी मुख–मुद्रा के द्वारा करते है।'' 12

---

(11) डॉ. चौबे योगेन्द्र, आधुनिक रंगमंच में छत्तीसगढ़ी लोकगाथा का अभिनय एवं संगीत पक्षः एक अध्ययन पृ. क्र. 199

आंगिक अभिनय में हस्त मुद्राओं का महत्वपूर्ण स्थान है। एक हाथ से असंयुक्त व दोनो हाथो के समन्वय से संयुक्त हस्त मुद्रा बनाई जाती है। अभिनय में अधिकाधिक हस्त मद्राओं का प्रयोग पंडवानी कलाकार की कुशलता का परिचायक है। एक प्रकार से इसे नृत्य की भाषा भी कहा जा सकता है। पंडवानी कलाकार मीना बाई साहू विभिन्न हस्त मुद्राओं का प्रयोग अपनी प्रस्तुति में करती है।

एक प्रसंग उनकी प्रस्तुति का :–

पद रचना :–

जब चला चीर खीचने दुसासन
करके अति अभियान
तब चीर रूपी हो गये श्री किरिसना चाँद भगवान।

पद रचना करने के साथ–साथ मीना भाई साहू द्रौपती चीर हरण के दृश्य में द्रोपती का अभिनय करते हुए अपना दायाँ पैर ऊपर उठाके बाएँ पैर के घुटनों के ऊपर टिका देती है, इसके बाद बायाँ हाथ ऊपर आकाश की ओर उठाके दाहिने हाथ से मयूर मुद्रा बनाके अपने नाभि के समीप लाती है, और आँखे बंद करके ध्यान मग्न हो जाती है और भगवान श्री कृष्ण का स्मरण करती है उनके द्वारा प्रस्तुत एक पद–

पद–

हे मोर कृष्ण जी
मोर लाज बचाओ
मुसीबत में हूँ
मोर लाज बचाव
हे मार कृष्ण जी, मोर लाज बचाव।

---

(12) मध्यप्रदेश की लोकगाथाएँ, संगीत के दृष्टिकोण से पृ. क्र. 46

इसके बाद कृष्ण का अभिनय करती हुई बाये हाथ कंधे के बगल में लाके पताका मुद्रा बनाते हुए चेहरे पर हल्की मुस्कान लिए होती है, तत् पश्चात दुर्योधन का अभिनय प्रस्तुत करती है।

दुर्योधन के संवाद –

मोर भुजा में अब्बड़ ताकत हैबे आज ते नइ बचबे द्रोपती हा हा हा .....

दुर्योधन का अभिनय करते हुए–

दोनो हाथों की मुष्ठी मुद्रा करके एक हाथ को आगे और दूसरे हाथ को पीछे की तरफ करते हुए साड़ी खोचने का अभिनय करती है– दुर्योधन कभी घुटनों के बल तो कभी खड़े होकर साड़ी खीचने की कोशिश करता रहता है, तदुपरान्त वह धीरे–धीरे थकने लगता है और दोनो हाथ निर्जीव पड़ जाते है अंत में वह थक हार के जमीन पर गिर जाता है।

इस तरह से देखने पर मीना बाई इसी तरह महाभारत के विभिन्न दृश्यों को गढ़ती है उनके अभिनय में विभिन्न हस्त मुद्रयों का प्रयोग देखने को मिल जाता है।

पंडवानी कलाकार संवादों के उतार–चढ़ाव के साथ–साथ अंग संचालन से पात्रों को जीवंत बनाता है। कभी–कभी इसकी जीवन्तता संवादहीन होकर भी हाव–भाव, हस्त मुद्राओं और आंगिक चेष्टाओं के द्वारा मूक अभिनय के रूप में दिखाई पड़ती है।

पंडवानी में एक ही कलाकार विभिन्न पात्रों का अभिनय करता है और इन पात्रों को मात्र संवादों के माध्यम से नहीं दर्शाया जा सकता इसक लिये विभिन्न क्रियाकलापों की आवश्यकता होती है, जिसमें से एक है आंगिक क्रिया जिसे पंडवानी कलाकार बखूबी प्रयोग करते है। इसी कारण मंच पर किसी अपेक्षित वेशभूषा और न ही कोई विशेष मंच सज्जा की आवश्यकता होती है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि पंडवानी में वाचिक अभिनय के साथ–साथ आंगिक अभिनय का समावेश होता है।

पंडवानी की प्रसतुति आंगिक अभिनय के माध्यम से

तीजन बाइ, ऋतु वमा, शांति बाई चेलक

वाचिक अभिनय–

''वाचा विरचितः काव्यनाटकादि तु वाचिकः।।'' 13

जब किसी घटना, कहानी, नाटक और लोकगाथा को शब्दों के माध्यम से मंच पर प्रस्तुत किया जाता है, वह वाचिक अभिनय के अंतर्गत आता है। आचार्य नंदकिशोर के मत से ''जिस नृत्य में वाणी द्वारा काव्य (गीत संगीत) और नाटकादि (सम–वादादि) का अभिव्यंजन किया जाए उसे वाचिक अभिनय कहते है।'' 14 अभिनेता जो कुछ भी मंच पर मुख से कहता है वह सब वाचिक अभिनय कहलाता है।'' 15

वाचिक अभिनय नाटक के प्राण है वाचिक अभिनय के लिए अलग–अलग अर्थ निकाले जा सकते है, ''वाचिक का सामान्य अर्थ है मौखिक, अलिखित, मुंह, जुबानी, मुहअखर किन्तु अभिनय के क्षेत्र में उसका अर्थ होगा संवाद उच्चारण, अदायगी, या डायलोग डिलवरी।''16 नाटक के शब्दों के माध्यम से दृश्यों को चित्रित किया जाता है। नाट्यशास्त्र के अनुसार– ''नाट्य का यह प्रमुख आधारभूत तत्व है तथा सर्वप्रथम अभिनय भी। इसी कारण भारतमुनि ने इसे नाट्य का शरीर कहा है जिसका कारण है– इसका वाणी द्वारा प्रस्तुत होना तथा वाणी ही जब उसका मूल हो तो फिर अन्य अभिनय इसका आधार लेकर प्रवित्त होंगे ही।''17 वाणी (शब्द) सम्प्रेषण का प्रबल माध्यम है। छत्तीसगढ़ी लोकगाथाओं में वाचिक अभिनय अन्य तीनों अभिनयों से अधिक महत्व रखता है यहाँ तक की सात्विक अभिनय की पूर्वता भी वाचिक अभिनय पर ही निर्भर करती है।

---

(13) गैरोला वाचस्पति , भारतीय नाट्य परम्परा और अभिनय दर्पण पृ. क्र. 200

(14) ––– वही ––– पृ. क्र. 200

(15) इनसाइक्लोपिड़िया, नेट सर्च

(16) डॉ. चौबे योगेन्द्र, आधुनिक रंगमंच में छत्तीसगढ़ी लोकगाथा का अभिनय एवं संगीत पक्षः एक अध्ययन पृ. क्र. 208

(17) पं. शुक्ल शास्त्री बाबूलाल, भाग 2 – नाट्य शास्त्र

शब्दों के ही माध्यम से कथाकार लोक गाथा को प्रदर्शित करता है, और इसकी प्रबल अभिव्यक्ति पंडवानी में देखने का मिलती है।'' पंडवानी विशेष प्रकार का कथा–गायन है मुख्यतः परधान एवं देवार तथा अंशतः पारधी एवं भिम्मा नामक जातियाँ इसके परम्परा गत गायक है, इनके अतिरिक्त भ्रमण शील समुदायों के कुछ लोग और गोंड, कंवर आदि जातियाँ ही पंडवानी का गायन करती है, किन्तु ये पंडवानी के परम्परागत गायक नही है ये शौकिया तौर पर व्यक्तिगत क्षमता के साथ गाते है पंडवानी के परम्परागत जाति की वंशानुगत गायकील है ये पीढ़ियों से पंडवानी का गायन अपने आस–पास के क्षेत्रों के अलावा घूमते हुए जहाँ पर रूक जाते थे, करते थे।'' 18 देवार और परधान जन जाति के लोग पंडवानी में संवाद शैली की अपेक्षा कथानक को गाकर प्रस्तुत करते थे–

परधान द्वारा पद रचना–

''धरम दुलारे पंडवा आय गैन दादा
जैतानगरी माँ हिरा बाग, बगैचा
हरियान लगिन भाई कुंआ तलैया
भर गैन हैं ददा महल अऊ अटारी
सज गैंहै भैया सोन्ने के महला
चांदी के चौका रूपे के खम्बा
जगमगान लागिन दादा धरम दुलारे पंडवा आइगहन हैं ह''..... 19
''मन–मन गुने माता दुरपती, दिल में तो करे विचार रे भाई।
जब मुख बोले माता दुरपति, सुनलेबे जोड़ी पंडवा हमार.... 20

---

(18) किशोर शुक्ल नवल, चौमासा अंकः11ः पंडवानी, पृ. क्र. 20, 21

(19) महावर निरंजन, पंडवानी, महाभारत की एक लोक नाट्य शैली पृ. क्र. 41

(20) ––– वही ––– पृ. क्र. 77

पंडवानी की दो शैलियाँ है और दोनों ही शैलियों में वाचिक अभिनय की प्रधानता देखने को मिलती है। पंडवानी का कोई लिखित पाण्डुलिपि नही है कलाकार कथा प्रसंगों को सुनकर कंठस्थ करते है, और अपने अनुभव व कलात्मक कौशल से मंच पर प्रस्तुत करते है। कलाकार अपने आसपास के परिवेश को ध्यान में रखकर शब्द योजना गढ़ते है।

झाडूराम देवांगन वेदमति शैली में गाने वाले उत्कृष्ट कलाकारों में से एक है, ये सबल सिंह चौहान द्वारा अनुवादित महाभारत के पदों को गाते है ''झाडूराम देवांगन ने लगभग 32 लोक रागों का अनुसरण तथा निर्माण किया है, जिसका प्रयोग वो पंडवानी में करते है। अलग–अलग चौपाई, दोहा में अलग–अलग रागों का प्रयोग करते हैं''। 21

इनके प्रस्तुति में गीत, संगीत और संवाद योजना इनकी खासियत है ये शब्दों के माध्यम से दृश्यों को चित्रित करते थे, कभी उनके शब्दों में भीम के असीम शक्ति का संचार होता है तो कभी अर्जुन के बाणों की तेजी से आकाश गरज उठता है। ये उनक संवादों का ही तो जादू है, जिसमें द्रोपती चीर हरण के दृश्य को मंच पर सजीव करने में सक्षम थे। उनके एक–एक शब्द दर्शकों को भाव–बिभोर होने पर मजबूर कर देते है और यही उनकी वाचिक अभिनय उत्कृष्टता है।

झाडूराम देवांगन की संवाद योजना–

दोहा– '' कीचक बली विशालतन, नृत तारूनिकै बन्धु।
सहसद्विरदसमानाहिबल, यौवनमदआस सन्धु।।

संवाद– शत बन्धन कीचक के बली बल अबगाहन नृप अस्थली।
सोहत इक इक मातु के जाये ऐसे सुभट महीपति भाये।।'' 22

---

(21) पंडवानी, मोनोग्राफ, म.प्र.अ.लो.क.प., भोपाल पृ. क्र.30

(22) महावर निरंजन, पंडवानी, महाभारत की एक लोक नाट्य शैली पृ. क्र. 85

इस आधार पर कहा जा सकता की वाचिक अभिनय पंडवानी की खासियत है और यह कहना अतिशोक्ति नही होगा की पंडवानी के कलाकारों ने संवाद योजना में महारत हासिल कर लिया है। झाडूराम दवांगन, ऋतु वर्मा, उषा बारले और तीजन बाई इसके श्रेष्ट उदाहरण है।

तीजन बाई अपने अभिनय कौशल के माध्यम से विभिन्न पात्रों को सजीव करती है वह नाटक की ही तरह शब्दों में लयात्मकता लाती है उनके संवाद द्रुत, मध्य और विलंबित लय में होते है।

उदाहरण स्वरूप– अभिमन्यु के मृत्यु उपरांत अर्जुन शोक और पीड़ा में डूब जाता है, इस प्रसंग को विलंबित लय में है–

''अर्जुन– हे द्वारकानाथ मोला सात स्वर्ग के धन मिलही तभो मई युद्ध लड़ाई नइ करौ।'' 23

अभिमन्यु के मृत्यु उपरान्त भगवान 'श्री कृष्ण' अर्जुन को गरूड़ में बैठा के स्वर्ग पहुंचते है वहां अभिमन्यु एक द्वार की रक्षा कर रहे है, अर्जुन अभिमन्यु के पास जाकर कहते है मुझे छोड़ के यहाँ क्यो चले आय, में तुम्हे अपने साथ लेने के लिए आया हूँ, तब अभिमन्यु कहते है मैं तुम्हारा पुत्र नही हूँ मैं तो चन्द्रमा का पुत्र हूँ और मेरा नाम बुध है, मै हमेशा देवों के लिए काम करता हूँ, तुम्हारा पुत्र तो मर चुका है कुरूक्षेत्र के मैदान में इस प्रसंग को तीजन बाई मध्य लय में प्रस्तुत करती है।

अभिमन्यु– ''काको पुत्र और काको जग नाती
यह संसार सपन को साथी।।'' 24

अर्जुन क्रोधित होके शपथ लेते ह, हे द्वारकानाथ मैं आप के समीप यह प्रण लेता हूँ अगर डूबने से पहले और सूर्य निकलने के बाद मैने जयद्रथ को नही मारा तो अपने हाथो चिता जलाके अग्निर में समाहित हो जाऊंगा इस प्रसंग को तीजन बाई द्रुत लय में प्रस्तुत करती है।

---

(23) महावर निरंजन, पंडवानी, महाभारत की एक लोक नाट्य शैली पृ. क्र. 96
(24) महावर निरंजन, पंडवानी, महाभारत की एक लोक नाट्य शैली पृ. क्र. 85

अर्जुन–द्वारकानाथ तोर करा प्रण करत हौं सूरज डूबे ले पहली अउ दिन उए के बाद मै हर कहूँ जयद्रथ ला नइ मरिहौ तो अपन हाथे मा चिता जला क मरि जैहों।

इस आधार पर कह सकते है, की पंडवानी की संवाद योजना नीरस और निर्थक नही है। अगर ऐसा होता तो कथा प्रसंग में रस और भाव देखने को नही मिलता। वाचिक अभिनय पंडवानी की खासियत है, जिसमें गीत और संगीत उसे और प्रबल बनाती है।

आहार्य :–

''आहार्यो हारकेयूर वेषादिभिरलंकृतः।'' 25

हार और केयूर आदि प्रसाधनों से सुसज्जित होकर जिस नृत्य का प्रदर्शन किया जाता है, उसे आहार्य अभिनय कहते है। शारीरिक सज्जा ही आहार्य अभिनय कहलाता है।

रंगमंच में भाव प्रदर्शन के लिए आहार्यभिनय की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। रंगमंच की परंपरागत वेशभूषा से अभिनेता या अभिनेत्री को सुसज्जित होना चाहिए। लोक रंगमंच में लोक कलाकार परंपरागत वेश–भूषा को धारण करता आया है। वेश–भूषा नाटक में एक पात्र का दूसरे पात्र से अलग करती है। हम सामान्य जीवन में जब किसी से पहली बार मिलते है, तब भी उस व्यक्ति के चरित्र का आकलन उसके वेशभूषा के आधार पर ही करते है। आहार्य एक प्रतीक चिन्ह की तरह है, जो किसी व्यक्ति को नाटक में विशेष पहचान दिलाता है।

---

(25) गैरोला वाचस्पति , भारतीय नाट्य परम्परा और अभिनय दर्पण पृ. क्र. 200

लोक–गाथा गायक अपने प्रस्तुति को आकर्षक बनाने के लिए लोक परिधान के चटक–मटक रंगों का प्रयोग करता आया है, यह रंग वह प्रकृति से प्राप्त करता है क्योंकि लोक कलाकार लोक–माटी से उपजा हुआ होता है। वह अपने आस–पास ऐसे ही चटक–मटक रंगो को दखता आया है। यह रंग उसे जंगल, पर्वत, पशु–पक्षी, खेत–खलिहान और अपने आस–पास के ग्रामीण परिदृश्य से प्राप्त होता है। इसी लिए लोककलाओं के परिधानों में प्रकृति के रंग देखने को मिल जाते है।

पंडवानी एकल नाट्य स्वरूप है इसमें वाचिक और आंगिक अभिनय की प्रधानता होने के कारण, किसी विशेष परिधान की आवश्यकता नही होती। कुछ प्रसंग ऐसे भी है जिसमें शब्दों से आहार्य को दर्शाया गया है।

उदाहरण :–

अहिरमती के आभूषण का वर्णन करते हुए भीम–

''कर मंज किए सुखवक्ष किए
पहिरे पट रेशम के चुनरी।
गर हाल–हेलाव सोनेन के
पहिरे सुतीय दोहरी–तिहरी।।

चूँकि यह एकल प्रस्तुति है और एक ही व्यक्ति द्वारा अलग–अलग पात्रों का अभिनय किया जाता है, किसी एक पात्र का वेशभूषा धारण करना संभव होता। कलाकार लोक संस्कृति के अनुरूप ही अपने वेशभूषा को धारण करते है, महिला कलाकार छत्तीसगढ़ी शैली में साड़ी बांधती है तथा अधिक से अधिक छत्तीसगढ़ी आभूषण पहनती है, ओंरीदाना, हमेल, नागमोरी, करधन, पैरी, आदि आभूषण धारण करती है। वही पुरूष वर्ग धोती कुर्ता व आभूषण धारण करते है, पंडवानी कलाकारों के आभूषण और वेशभूषा में विभिन्नता हो सकती है। और यही अलंकरण पंडवानी की प्रस्तुति को पूर्ण करते है।

अत्यधिक साजसज्जा भी सहज भावों को व्यतिरेख करती है अतः कलाकार को सदैव पंडवानी प्रदर्शन के अनुरूप ही आहार्यभिनय का प्रयोग करना चाहिए। उपयुक्त संतुलित व सादगी पूर्ण ढंग से की गई सज्जा केवल सुन्दरता को ही नहीं अपितु भावों को भी उभारती है।

लोकसंस्कृति के अनुरूप पुरूष व स्त्री दोनों को आभूषण धारण करना चाहिए। परम्परागत प्रदर्शन में विभिन्न अवस्थाओं या प्रसंगों में परिधान परिवर्तन की आवश्यकता नही है। गाथाकार अपने भावाभिनय के माध्यम से ही उन अवस्थाओं या प्रसंगों की अभिव्यक्ति को सार्थक करता है, क्योंकि छत्तीसगढ़ रंग में रंगे होने के कारण यह जन सामान्य से जुड़ चुकी है। पंडवानी में आहार्य अभिनय पारंपरिक रूप से होने के साथ–साथ इसकी विशेषता भी है।

सात्विक अभिनय–

''सात्विकः सात्विकैर्भावज्ञेन विभावितः।।
सात्विक भावों से भवज्ञ 'सात्विक' अभिनय दिखलाता है।''

कला की अभिव्यक्ति के लिए अंतर मन जुड़ाव आवश्यक है और अंतर मन का जुड़ाव सात्विक भावों को प्रदर्शित करता है। सात्विक भावों के द्वारा कलाकार दर्शकों से भी एकाकार हो जाता है, सात्विक भावों की अभिव्यक्ति के लिए कलाकार का एकाग्रचित होना अति आवश्यक है। सत्य को मंच पर भावों के द्वारा दर्शाया जाता है, पंडवानी की प्रस्तुति भाव प्रधान होती है कथाकार हर एक प्रसंग में अपने भावों की अभिव्यक्ति से कथा के मर्म को समझाने का प्रयास करता है, चाहे वह द्रौपती चीर हरण में द्रौपती और दुस्साशन के भाव हो, अभिमन्यु के उपरान्त मृत्यु अर्जुन की

सात्विक अभिनय–

तीजन बाइ द्वार सूक्ष्मतम भाव प्रदर्शन करते हुए

वेदना हो या फिर अर्जुन को कृष्ण द्वारा गीता का उपदेश इन सभो प्रसंगों में सात्विक अभिनय सामान्य रूप से उपस्थित है।

पंडवानी का भाव चूँकि सूक्ष्मतम प्रदर्शन है, इसे बैठकर और खड़े होकर कथाकार दर्शक के समक्ष प्रस्तुत करता है, तो इसमें आंगिक वाचिक और आहार्य अभिनय भी आंशिक रूप से मौजूदगी होती है, अतः इसमें मनोरंजन से अधिक प्रभावित करने का कौशल मायने रखता है। कहने का तात्पर्य यह है कि इस प्रस्तुति में विभिन्न सात्विक भावों की अभिव्यक्ति की अधिक सम्भावनाएँ है।

किसी भी नाट्य रूप को प्रसिध्द और प्रख्यात होने के लिए अभिनय तत्व की महत्वपूर्ण भूमिका होती है और पंडवानी में अभिनय के सभी तत्व मौजूद है। यही अभिनय की प्रबल प्रवृत्ति हमें झाड़ूराम देवांगन, ऋतु वर्मा और तीजन बाई की प्रस्तुति में सामान्य रूप से देखने को मिलती है।

रस

नाट्य काव्य आदि ललित कलाओं को देखने, सुनने से जिस आलौकिक आनन्द की अनुभूति होती है उसे सामान्यतः ''रस'' कहते है। नाट्य का तो प्रमुख तत्व ही रस माना गया है। सर्वप्रथम रस की विस्तृत विवेचना हमे भरतमुनि द्वारा रचित ग्रंथ नाट्यशास्त्र में देखने को मिलती है। भरत मुनि का कथन है कि रस के बिना कोई भी नाट्यांग रूप अर्थ प्रवृत्त नही होता–

'' न हि रसाध्ते कश्चिदर्थः प्रवर्तते'' 27

उनके मतानुसार ''नाटक का साध्य रस है।'' भरतमुनि ने रस को इस प्रकार परिभाषित किया है :– विभावानुभाव व्यभिचारिसंयोगादरसनिष्पतिः''

---

(27) शुक्ल शास्त्री बाबूलाल, भाग 1, अध्याय 6 नाट्य शास्त्र

अर्थात् विभाव (आलंबन और उद्दीपन) अनुभाव (आंगिक, वाचिक आहार्य और सात्विक) व्यभिचारी के संयोग से रस की निष्पत्ति होती है।

भरतमुनि ने अपने नाट्य शास्त्र में मुख्य रूप से जिन आठ रसों की चर्चा की है, वह रस कही न कही हमे लोकगाथा पंडवानी में भी देखने को मिलते है।

(1) <u>श्रंगार रस</u> –

नायक नायिका के मिलन को श्रृंगार रस के अन्तर्गत लिया जाता है पंडवानी के अनेक प्रसंगों में हमे श्रृंगार रस का वर्णन देखने को मिलता है।

अर्जुन एक बार एक ब्राहाण के गाभीयों को बचाने के लिए वचन तोड़कर युधिष्ठिर के घर में प्रवेश किया तब युधिष्ठिर और पांचाली शारीरिक संबंध बना रहे थे इस कारण अर्जुन को बारह वर्ष का वनवास भोगना पडा, अर्जुन के वनवास के दौरान जब वह मनिपुर जाता है तब उसकी मुलाकात चित्रांगदा से होती है चित्रांगदा अत्यन्त ही रूपवती रहती है जिसे देखकर अर्जुन के प्रेम निवेदन को सहर्ष स्वीकार करती है और दोनो शादी कर लेते है।

<u>उदाहरण</u> :–

अर्जुन जंगल म घूमत रीथे, तभी ओला चित्रांगदा दिखाई देथे, अउ ओला देख के किथे

<u>अर्जुन</u> – कतेक सुन्दर हवे ये रूपवती कौन आवे
चित्रांगदा भी अर्जुन के रूप ल देख के मन्दमुग्ध हो जाथे
आँखी में आँखी टकराइस।
जब चित्रांगदा रूपवती स्त्री के रूप में आथे
अर्जुन ओला देख के मोहित हो गे।।

(2) <u>हास्य रस</u> –

हास्य रस का स्थायी भाव हास है, इसका आर्विभाव, चेष्टा, वाग् आकार, वेष एवं अन्यान्य प्रकार की विकृतियों के वर्णन अथवा अभिनय से होता है, पंडवानी में क्षेत्रियता को जोड़कर भी प्रस्तुत किया जाता है वैसे तो पंडवानी में वीर रस देखने को मिलता है किन्तु कुछ ऐसे पात्र है जिनको देखकर या जिनके नाम से ही हँसी आ जाती है उन पात्रों में से एक पात्र है मामा शकुनी जिसे पंडवानी कलाकार बड़े ही मजाकिया ढ़ंग सेस प्रस्तुत करते है जिसमें हास्य रस की प्रधानता देखने को मिलती है।

उदाहरण :–

जैत नगरी में पाण्डव से भेट करने के लिए मामा शकुनी पहुँचते है माता कुंती पानी लेकर पैर धुलाने के लिए द्वार पर आती है, इसके बाद द्रौपदी मामा शकुनी के पैर छूती है। पाण्डव भाईयो को लगता है, मामा शकुनी के कोई न कोई षडयंत्र रचने के लिए आए है फिर भी एक एक कर सभ्झी पाण्डव भाई मामा से भेंट करते है, अंत में भीम से भेट होती है तब भीम मामा शकुनी को अपने बाहू पाश में इतना जोर से जकडते है कि मामा के मुँह से निकलता है '' ऐ दादा'' और वह मन ही मन सोचते है कि ये कही मेरी हड्डी को तो नही तोड़ डालेगा

''कछु हवै धोखा कैसे मा आइस
या मामा दादा अभी तो गये रहै
अब कैसे आइस कछू फंद रचे है।
मामका रे दादा एखर करनी के मजा चखा हूं हो...।'' 28

---

(28) महावर निरंजन, पंडवानी, महाभारत की एक लोक नाट्य शैली पृ. क्र. 46

(3) करूण रस –

करूण रस का स्थाई भाव शोक है शोक से अभिव्यंजित होने वाला रस 'करूण रस' कहलाता है। यह रस करूण्य प्रधान है अनिष्ट प्राप्तिएवं इष्टनाश से इसका अर्विभाव संभव है। पंडवानी में महाभारत की कथा का संपूर्ण विवेचन है केवल प्रस्तुतिकरण की शैली अपनी विशेषता लिए हुए है।

करूण रस के उदाहरण स्वरूप अभिमन्यु प्रसंग को देखते है जिसमें अभिमन्यु की मृत्यु उपारांत अर्जुन शोक में डूब जाता है और युद्ध स्थल छोड़कर जंगल में सन्यास के लिए चले जाते है तब भगवान श्री कृष्ण उनसे जाकर कहते है, हे अर्जुन तुम क्षत्रिय कुल में जन्म लिए हो लड़ाई नही करोगे तो मृत्यु उपरांत नर्क में जाना होगा।

।। भजन बिन मुक्ति नहीं होवै भाई।।

श्याम सुखदाई, मोर हलधर के भाई
भजन बिन मुक्ति नहीं होवै भाई।। 29

(4) रौद्र रस –

इसका स्थायी भाव क्रोध है। इच्छा के विरूद्ध किसी कार्य के होने पर या किसी के द्वारा हानि पहुॅचाने पर क्रोध की उत्पत्ति होती है। पंडवानी में रौद्र रस का उदाहरण कलाकार संवाद में अभिनय करते हुए बड़ी खूबसूरती से प्रस्तुत करता है पंडवानी की प्रस्तुति गद्यात्मक और पद्यात्मक (अर्थात् गायन) दोनो तरीकों से होती है।

अभिमन्यु की हत्या के पश्चात क्रोधित अर्जुन के प्रण में रौद्र रस के दर्शन होते है :– अर्जुन कहता है कि आज दिन डूबने से पहले जयद्रथ को नही मार तो मै चिता में अग्नि प्रज्वलित करके प्राण दे दूंगा।

''द्वारकानाथ तोर करा प्रण करत हौं
सूरज डूबे के पहिली अउ दिन उए के बाद मैं
हर कहूं जयद्रथ ला नइ मरिहौं तो अपन हाथे

---

(29) महावर निरंजन, पंडवानी, महाभारत की एक लोक नाट्य शैली पृ. क्र. 46

सूरज डूबे के पहिली अउ दिन उए के बाद मैं
हर कहूं जयद्रथ ला नइ मरिहौं ता अपन हाथे
मा चित जला के मरि जैहो भाई। सूर्य उदय के
बाद अउ दिन डुबे के पहिली नइ मारिहौ तो
मै चिता में जल के मर जाहौं।'' 30

(5) <u>वीर रस</u> –

उत्साह वीर रस का स्थायी भाव है। इसमें वीरता बलिदान और राष्ट्रीयता जैसे सद्‌गुणों का संचार होता है। इस रस में आज गुण की प्रधानता रहती है। महाभारत की कथा वीरता प्रधान है अतः पंडवानी में वीर रस के चारो भेदो दानवी, धर्मवीर, युद्धवीर और दयावीर के अधिकाधिक प्रसंग उदाहरण स्वरूप देखने को मिलते है–

''बकासुर वध का प्रसंग चल रहा है, पूनाराम जी गा रहे है हाथ में खडताल पूरे सुर ताल में बज रहा है–

मानस मन बहुराना जी
मानस मन बहुराना

इस बार–बार के अनुकृति के बीच किसी नारी का करूण स्वर फूट पड़ता है कुन्ती अपने पुत्रों सहित किसी गरीब ब्राम्हण के घर छिपी है आधी रात का समय है, कुन्ती पूछती है– हे बहन क्या हुआ? ब्राम्हणी ने राते–रोते बतलाया आज मेरे पुत्र की बारी है। छकड़े में वह गांव भर का अन्न लेकर बकासुर के पास जायेगा और फिर वापस कभी नही आयेगा–

का होगिस बहिनी काबर रोवत हावस वो
का दुख तोला पर गे बहिनी बता तो मोला वो?
का बतावो दीदी आज मोर बेटा के पारी वो
बकासुर के अहार ओ ह बनही दीदी वो।

---

(30) महावर निरंजन, पंडवानी, महाभारत की एक लोक नाट्य शैली पृ. क्र. 46

कुन्ती ने बारी–बारी से पांचो बेटों की ओर देखा भीम बोल

पडा– ऐमा का के चिंता करत हवस दाई मोला जावन दे ना माई मोला जावन दे ना वा भीम कुन्ती को आश्वस्त करते है, कि मेरे मरने के बाद भी तुम्हारे चार बेटे तो रहेंगे लेकिन यह ब्राम्हण पुत्र गया तो माता अनाथ हो जाएगी।'' 31

(6) <u>भयानक रस</u> –

इसका स्थायी भाव भय है, स्वरों के आरोह–अवरोह से पंडवानी कलाकार भय नाम स्थायी भाव को जागृत करने में सफल होते है।

पंडवानी गाथाकार युद्ध में हुए भीषण परिणाम का भयावह वण्रन इस प्रकार करते है, उदाहरणस्वरूप लाखो लोग मारे जा चुके है माताओं की गोद सूनी हो चुकी है स्त्रियाँ विधवा हुए एक कगार में खडी है भाई ने भाई को मारा है

यह दृश्य भयानक नही तो क्या है।

युद्ध खतम होग
लाखो झन मरे पडे हवे

माता अपन लइका ला खोजत हबे

स्त्रि मन विधवा होगे

भाई–भाई ल मार डारिस

ऐ कइसे युद्ध के परिणाम आए

इस प्रसंग में हमे भयानक रस देखने को मिलता है।

---

(31) डॉ. चौबे योगेन्द्र, आधुनिक रंगमंच में छत्तीसगढ़ी लोकगाथा का अभिनय एवं संगीत पक्षः एक अध्ययन, पृ. क्र. 252

(7) विभत्स रस –

इसका स्थायी भाव घृणा (जुगुप्सा) है घृणोत्पादक वस्तुओं को देखकर मन में जुगुप्सा का भाव उत्पन्न होता है जिसके कारण विभत्स रस

का उद्रेक होता है वैसे तो मंच पर इस रस का प्रयोग निषेध है। यह निषिद्धता साकार वस्तुओं के लिए होगी। पंडवानी में कुछ प्रसंग विभत्स रस से सम्बन्धित हमें देखने को मिलते है।

उदाहरण स्वरूप –

कौरव द्रौपदी द्वारा हुए अपने अपमान का बदला लेना चाहते थे, इसलिए उन्होने शकुनी के कहने पर पाण्डव को जुआ खेलने के लिए आमंत्रित किया लेकिन शकुनि के चमत्कारिक पासों की वजह से पाण्डव जुए में धीरे–धीरे सबकुछ हार गए, आखिर में युधिष्ठिर ने द्रौपदी को दांव पर लगाया और उसे भी हार गए, जिसके बाद कौरव ने द्रौपदी का चीर हरण किया, द्रौपदी चीखती रही, चिल्लाती रही मगर सभा में मौजूद किसी भी महान योद्धा नरे उसकी चीख न सुनी।

मे कोई वस्त हू का,
जेन ला तुमन पॉचो भाई, जुआ म हार गेव।
दु:शासन मोर साड़ी ल धरत है,
तुमन पाँचो भाई मोर रक्षा नही करो क।
पितामह तोर आँखी के सामने क होवत ह,
ते तो मोर रक्षा करबे न।
गुरू द्रोण तहू मोर रक्षा नही करस,
दु:शासन मोर साडी छोड़।
कोनो नही हे ऐ सभा मे,
जेन मोर रक्षा करही।।

(8) <u>अद्‌भुत रस</u> –

अद्‌भुत रस की निष्पत्ति विस्मय स्थायी भाव से होती है, महाभारत तथा पंडवानी दोनो में ही चमत्कारों का वर्णन देखने को मिलता है। उदाहरण स्वरूप ग्यारहवें अध्याय के आरम्भ में भगवान श्री कृष्ण ने विश्वरूप के दर्शन के रूप में अपने को प्रत्यक्ष किया इसी विराट स्वरूप में समस्त ब्रम्हांड को समाहित देख अर्जुन अद्‌भुत रस से ओत–प्रोत होकर मोह मुक्त हुए।

अर्जुन किथे मै युद्ध नही लडू।
ऐ मन तो मोर गुरू अऊ सगा सम्बन्धी हबे
तब भगवान श्री कृष्ण हा अर्जुन ला गीता के उपदेश देथे
अऊ अपन विराट रूप ला घलो दिखाथे।।

इस प्रकार आंशिक रूप से लोकगाथा पंडवानी में लगभग सभी रसों का समावेश परिस्थिति व आवश्यकता अनुसार हुआ है।

———000———

अध्याय 4

पंडवानी शैली में नाट्य प्रयोग तथा सम्भावनाएँ

(1) पंडवानी शैली का रंगमंचीय प्रयोग

(2) संभावनाएँ

रंगमंचीय प्रयोग

शांति बाई चेलक द्रोपती की भुमिका में

शांति बाई चेलक प्रशिक्षण देते हुए

पंडवानी शैली का रंगमंचीय प्रयोग –

लोकगाथा पंडवानी अपने व्यापकता और विशालता के कारण हमेशा प्रयोगशील रहा है, देवार और परधान जन–जातियों ने इसे मध्यप्रदेश और छत्तीसगढ़ के क्षेत्रों में प्रचार प्रसार करके स्थापित किया है। इसके बाद अन्य जातियों के लोगों ने भी पंडवानी गायक की शुरूआत के क्रम में सर्वप्रथम नारायण लाला वर्मा का नाम लिया जाता है, ऐसा माना जाता है कि आज जो वर्तमान पंडवानी का स्वरूप है वो इन्ही की देन है। झाडूराम देवांगन ने अपनी प्रस्तुति में अभिनय को प्राथमिकता दी और पंडवानी को नाट्य के समीप ला खड़ा किया है। पंडवानी के पर्याय विश्व विख्यात तीजन बाई ने संवादों में नवीनतम प्रयोग किए, उनके संवाद नाटक के समान धारदार होने के कारण दर्शकों को कर्ण प्रिय लगते है। तीजन बाई से प्रभावित होकर प्रदेश में कई और भी पंडवानी मंडलो बनने लगी है और इन मंडलियों ने इसे देश ही नही बल्कि विदेशों में भी प्रसिध्दी दिलाई। यह इन कलाकारों की मेहनत ही है जिसने पंडवानी को रंगमंच के समीप लाने का कार्य किया और उसे एकल नाट्य का रूप दिया।

श्री नन्द किशोर तिवारी ने इसके इस गुण को रेखांकित करते हुए कहा है – ''पंडवानी गायन एक बड़ी सीमा तक प्रिमिटिव्ह एज का, थियेटरनुमा कर्म है। एक ही कलाकार कथा का गायन तथा कथा के प्रसंग के अनुरूप अभिनय करता है, वह अपने एकल अभिनय के माध्यम से द्रोपती की पीड़ा को जितनी ताकत के साथ अभिव्यक्ति देता है उसकी यही अभिव्यक्ति की शक्ति उसे जनसामान्य के बीच प्रतिस्थापित करती है और यही उसकी विशेषत है।... यहाँ तक की किसी दूसरे अंचल में कौरव–पांडव का एकल कथागायन, जिसमें प्रिमिटिव्ह थियेटर के गुण हो, का कोई प्रमाण नही मिलता, इस तरह 'पंडवानी' छत्तीसगढ़ अंचल की अपनी एक विशिष्ट सांस्कृतिक धरोहर है।''1

---

(1) तिवारी नन्द किशोर, भरथरी, म.प्र. आदिवासी लोक कला परिषद भोपाल, पृ. क्र. 57, 37

स्वाभाविक है पंडवानी को लेकर रंग निर्देशकों में उत्सुकता और भी बढ़ने लगी थी, और वह अपने नाट्य निर्देशन में पंडवानी को लेकर प्रयोग की सम्भावना ढूंढने लगे थे, बहुत से निर्देशकों ने पंडवानी का नाट्य प्रयोग किया जिसे हम निम्नानुसार समझ सकते है–

(1) हबीब तनवीर

(2) मिर्जा मसूद

(3) डॉ. योगेन्द्र चौबे

(4) राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय के निर्देशक

हबीब तनवीर –

पंडवानी को लेकर सर्व प्रथम हबीब तनवीर ने रंगमंचीय प्रयोग किया है। तनवीर जी लोककलाओं की प्रयोगशीलता के लिए जाने जाते थे, इन्होने अपने रंगनिर्देशन में छत्तीसगढ़ी लोककलाओं को प्राथमिकता दी, क्योंकि उन्होने यहाँ की संस्कृति को नजदीक से देखा और समझा था। वे ''ब्रेख्त'' से काफी प्रभावित भी थे, ''बार्तोल ब्रेख्त'' के रंग सिध्दान्त छत्तीसगढ़ी लोककलाओं के काफी करीब माना जाता है। हबीब तनवीर ने छत्तीसगढ़ी रंगमंच में असीम योगदान दिया है। लोकनाट्य नाचा को देश और विदेशों में प्रसिध्दी दिलाई और यहाँ के लोक गीतों तथा लोक नृत्यों को लेते हुए इनका प्रयोग अपने नाटकों में किया। चरनदास चोर, इन्दर लोकसभा, गाँव के नाव ससुराल मोर नावं दामाद, मिट्टी की गाड़ी, बहादुर कलारिन आदि में पंथी, सुआ, ददरिया, कर्मा, और नाचा–गम्मत का प्रयोग करते रहे, तो फिर पंडवानी उनसे अछूता कैस रह सकता था। इस सन्दर्भ को आगे बढ़ाते हुए डॉ. योगेन्द्र चौबे कहते है, पंडवानी को प्रसिध्दी दिलाने में किसी का विशेष योगदान है तो वो है हबीब साहब का है।

में किए अपने प्रयोग का महावीर अग्रवाल से साक्षात्कार के दौरान तनवीर जी, पंडवानी अनुभव साझा करते हुए कहते है– ''पूनाराम को एकेडमी अवार्ड मिला। वे विदेश गये, वहां भी बहुत नाम कमाया। बस यही कुछ

सोचकर मैने पंडवानी की चार मंडलियों का अशोका होटल, दिल्ली के खुले मंच पर एक प्रोग्राम प्रस्तुत किया। उनमें पूनाराम के अलावा गाँव बासिंग (जिला–दुर्ग) के झाड़ूराम देवांगन, राजनांदगांव के रेवा राम साहू और तीजन बाई भी शामिल थी। उनको अपने अपनी पसंद के चार प्रसंग दे दिए गये थे और कलाकारों ने अपनी–अपनी विशेष शैली में ये प्रसंग के चार दिनों में पेश किए थे। अब अर्जुन का सारथी' लोगों को कुछ इतना पसंद आया की घर–घर पूना राम की दावतें होती बड़े चाव से खाना खिलाया जाता पंडवानी कराइ जार्ती मेरा हौसला बढ़ा। मैने सम्पूर्ण महाभारत करोल बाग के एक मैदान में खुले मंच पर प्रस्तुत की। 18 दिनों तक लोगों का एक मेला लग गया महिलाये बहुत बड़ी संख्या में आई। जब–जब आरती घुमाई जाती– मसलन द्रोपती विवाह, सुभद्रा विवाह आदि में– लोग अनाज देते, फल फलाहारी, सब्जी तरकारी की भेट चढ़ाते।'' 2

पंडवानी का प्रयोग इन्होने भट्टनारायण का संस्कृत नाटक 'वेणी संहार' में भी किया है। तनवीर जी कहते है 'वेणी संहार' नाटक को पढ़ने में उन्हें पीस और शांति की अनुभूति हुई और नाटक के अंत में भीम और दुर्योधन तक का फर्क लेखक ने मिटा दिया है। खून में लथपथ भीम को देखकर द्रौपती समझती है कि वह दुर्योधन है। पंडवानी शैली का प्रयोग बीच–बीच में करते, ऐसा करने से नाटक में रोचक आर जीवन्तता बनी रहती। पंडवानी कलाकारों को रंगमंच पर प्रयोग करते रहे, उनके अनुसार पंडवानी एक धार्मिक प्रस्तुति की बजाय एक धर्मनिरपेक्ष नाटक के रूप में ज्यादा उभरकर आई।

मिर्जा मसूद –

अस्सी के दशक से वर्तमान समय तक छत्तीसगढ़ी रंगमंच में सक्रीय निर्देश के रूप में मिर्जा जी को जाना जाता है। मिर्जा जी लगातार अपने नाटकों का मंचन करते रहते है अवंतिकाऔर कोलस नाट्य आकादमी

---

(2) अग्रवाल महावीर, हबीब तनवीर का रंग संसार, पृ. क्र. 112

में बतौर निर्देशक आप काम करते रहे। छत्तीसगढ़ी लोकसाहित्य में गहरी पकड़ है और समय समय पर, अपना अनुभव युवा रंगकर्मियों से साझा करते रहते है। आप के निर्देशन में ''गोदान, जिन लाहौर वही देख्या, हरिश्चंदर की लड़ाई, कोर्ट मार्शल, अंधायुग, माटी की गाड़ी, कालीगुला '' आदि अवंतिका' ने 'जामुन का पेड़' एवं उसकी माँ आदि की कहानियों का नाट्य रूपांतरण भी अत्यंत कलात्मकता से प्रस्तुत किया। छत्तीसगढ़ी संस्कृत की झलक आप के नाटकों की विशेषता है, लोककलाओं का प्रयोग अपने नाटकों में करते रहते है।

मिर्जा मसूद ने धर्म वीर भारती द्वारा लिखित नाटक 'अन्धा युग' को लोकगाथा पंडवानी शैली में रूपांतरित किया, यह प्रयोग अपने आपमें अद्‌भुत है, क्योंकि पंडवानी की ही तरह इसे एकल माध्यम से प्रस्तुत किया गया। अभी तक पंडवानी शैली का प्रयोग नाटक के बीच–बीच में होता था, या नाटक सम्पूर्ण पंडवानी शैली में निर्देशित किया गया था। हिरादास मानिक पुरी के अभिनय कौशल ने इस प्रयोग को सफल किया।

नाटक के प्रयोग की अनंत सम्भावना है, निर्देशक ने यह साबित कर दिया की पंडवानी में इसके रूप को बिगाड़े बिना सम्भावना तलाशे जा सकते है।

डॉ. योगेन्द्र चौब –

अगर हम छत्तीसगढ़ में युवा रंगकर्मी, निर्देशक की बात करते ह तो हमारे सामने डॉ. योगेन्द्र चौबे का नाम शीर्ष पर आता है। आप मूलतः छत्तीसगढ़िया रंगकर्मी के रूप में जाने जाते है। राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली से परिकल्पना एवं निर्देशन में विशेषज्ञता सहित स्नातक, इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय खैरागढ़ द्वारा पी.एच.डी. की उपाधि। छत्तीसगढ़ी आधुनिक एवं लोक रंग मंच पर कार्य करते हुए

तीजन बाई पंडवानी शैली का प्रयोग नाटक के बीच–बीच में करते हुए।

अध्यापन, निर्देशन एवं अभिनय में सक्रीय। 'देवार' परम्परा पर कार्य करने हेतु रा.ना.वि. द्वारा फेलोशिप प्राप्त किया। दिल्ली दूरदर्शन के लिए निर्मित टैली फिल्म 'धरती अब घूम रही है' फीचर फिल्म बहा के लिए कला निर्देशन। निर्माणाधीन फिल्म 'सहिया' के लिए पटकथा लेखन।

लोकगाथा विषय को लेकर आप समय–समय पर आलेख प्रस्तुत करते रहते है, आपके द्वारा प्रकाशित आलेख छत्तीसगढ़ी लोकगाथा में अभिनय की तलाश छत्तीसगढ़ लोकगाथाओं की प्रस्तुति में आधुनिक रंग सिध्दांतों का प्रयोग, छत्तीसगढ़ी लोकगाथा पंडवानी का अभिनयगत वैशिष्ट्यः स्व. झाड़ूराम राम देवांगन एवं पद्म श्री तीजन बाई की प्रस्तुतियों के परिपेक्ष्य और रंगमंच पर आधारित पुस्तक ''रंगमंच परम्परा और प्रयोग'' आदि पर लेखन कार्य करते रहते है।

यह छत्तीसगढ़ी लोक भाषा में नाट्य प्रयोग करते रहते है, बाबा पाखंडी में छत्तीसगढ़ी भाषा और लोक कला को नाटक में समाहित किया व विशेष रूप से नाचा शैली का प्रयोग किया इसके अलावा लोकगाथा शैली का भी प्रयोग आप अपने नाटकों में करते रहते है।

अजय आठले के साथ मिलकर आप ने बकासुर का मंचन किया इस नाटक की रूपरेखा पंडवानी शैली में तैयार किया गया, नाट्य प्रस्तुति को सफल बनाने के लिए गुड़ी संस्था के कलाकारों को साथ लिया। पंडवानी शैली को समझने के लिए आप तीजन बाई से समय–समय पर मिलते रहे और पंडवानी की प्रस्तुति शैली की बारीकियों को समझा। ये निर्देशन का ही प्रयोग है की गाथा को नाटक की एक शैली के रूप में सम्मलित करके प्रस्तुत किया गया और यह प्रयोग बताता है कि एक कला दूसरी कला से कैसे जुड़ी हुई है, एक निदेशक के लिए पंडवानी में वो सभी तत्व है जिसे नाटक में लिया जा सकता है।

बकासुर की प्रस्तुति रायगढ़ और इंदिरा कला संगीत विश्व विद्यालय में किया, नाटक सफल रहा प्रदेश और राजधानी मे भी इसकी काफी चर्चा हुई। ऐसे बहुत ही कम निर्देशक है, जिन्होने लोकगाथा पंडवानी का निर्देशन अपने नाटकों में किया हो और डॉ. योगेन्द्र चौबे ने पंडवानी शैली में नाट्य प्रयोग करके यह बताया है की पंडवानी 'नाचा' के समान ही रंगमंच में प्रयोग किया जा सकता है, वैसे भी पंडवानी नाटक का एक रूप ही है जो दस रूपकों के भांड के समान है।

इसके अलावा आप अन्य नाटकों में भी छत्तीसगढ़ी लोक कलाओं का प्रयोग करते रहे है। चर्चित नाट्य प्रस्तुतियाँ–लुकुवाआ शाहनामा, माया नगरी, लहरों के राज हंसा, इंस्पेक्टर माता चाँद पर, तिड़ोराव, रानी दाई, रिदम ऑफ दा फॉरेस्ट, बाबा पाखंडी, परतें, नरवानरियम, मधुशाला।

राष्टोय नाट्य विद्यालय –

राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय अपने छात्र–छात्रों को भारतीय लोक कला को समझने के लिए पाठ्यक्रम के साथ वर्कशॉप का आयोजन कराता रहता है। इसी क्रम में छत्तीसगढ़ी लोकगाथाओं को लेकर भी कार्य किया गया, विद्यार्थियों द्वारा ''इक तारा टूटा'' का नाट्य रूप तैयार किया गया, इसकी प्रस्तुति शैली छत्तीसगढ़ी लोकगाथा लोरिचंदा के अनुरूप था, ऐसे प्रयोग विद्यार्थियों को लोक कलाओं को नजदीक से समझने का अच्छा मौका होता है। रंग शिविर का निर्देशन बंशी कौल ने किया था, इस का नाट्य स्क्रिप्ट सुमन कुमार ने तैयार किया और संगीत संजय उपाध्याय ने दिया था। यह आयोजन सफल रहा, क्योंकि चंदैनी के मूलस्वरूप में बिना किसी परिवर्तन के प्रस्तुत किया गया था। शिविर का आयोजन छत्तीसगढ़ के बिलासपुर में आयोजित किया गया, इस कार्यशाला में रेखा देवार को लोक गाथा विशेषज्ञ के रूप में लिया गया।

पंडवानी शैली को लेकर राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, प्रो. त्रिपुरारी शर्मा ने शांति बाई चेलक के साथ मिलकर भानु मति और द्रोपती के कथानक को पंडवानी शैली में खेला जहाँ एक तरफ त्रिपुरारी शर्मा रंगमंच में विशिष्ट वर्ग से आती है वही दूसरी तरफ शांति बाई चेलक ने ग्राम संस्कृति में अपनी कला को संजोया है, फिर भी गाथा प्रस्तुति में इनका कोई जवाब नही है।

इस प्रस्तुति में एकतारा लिए हुए भानुमती के कथानक को गुजरात के गोधरा कांड से जोड़ते हुए प्रस्तुत किया गया। दंगों में महिलाओं पर हुए अत्याचार और उनकी पीड़ा मानवीय संवेदना को झंझोड़ देने के लिए काफी था। प्रयोग सफल रहा नाटक और यह प्रयोग देश के अन्य निर्देशक को प्रोत्साहित करने वाला था और नाचा के समान ही पंडवानी में रंगमंची की नई परिकल्पनाओं की ओर अग्रसर करती रही।

इस प्रयोग ने भानु भारती को सफल निर्देशकों में ला खड़ा किया। प्रस्तुति की काफी चर्चाये भी हुई, आगे चलकर उन्होने ''आजादी की लड़ाई'' में भी पंडवानी का सफल प्रयोग किया है, इस नाट्य प्रस्तुति में शांति बाई चेलक को मुख्य भूमिका दी गई थी। जिसका उन्होने सफलता पूर्वक निर्वाह किया।

छत्तीसगढ़ी लोकगाथा और शैली का प्रयोग रंगमंचीय गतिविधियों में होता रहा है। कुछ निर्देशक इसमें सफल हुए तो कुछ असफल वैसे भी बिना पंडवानी शैली को समझे सफलता की गुंजाइश कम ही है, क्योंकि अल्प ज्ञानी मूल तत्व को विकक्षेपित करके परिष्कृत कर सकता है। इसके लिए निर्देशक को छत्तीसगढ़ी लोकसंस्कृत में गहरी रूची होना जरूरी जान पड़ता है और विषय को लेकर उसका अध्ययन कार्य पर निर्भर करता है।

संभावनाएँ –

हिन्दू धर्म में महाभारत का काफी महत्व है, यह एक ऐसा कथानक है जिसे रंगमंच, फिल्म और टीवी सरिअल में बहुत बार प्रयोग

किया गया है। इसका एक स्वरूप हमें छत्तीसगढ़ की लोकगाथा पंडवानी में देखने को मिलता है। आज पंडवानी छत्तीसगढ़ी लोक साहित्य को अभिव्यक्त करने का सशक्त माध्यम भी है, जिसमें महाभारत के दृश्य, लोकरंजकता के साथ उभर के सामने आते है। कथाकार दर्शकों से सीधा संवाद भी स्थापित करता है जिससे दर्शक और प्रस्तुतकर्ता के बीच सीधा सम्बन्ध स्थापित होता है। पंडवानी मात्र धार्मिक कथा नहीं है इसमें छत्तीसगढ़ी लोक विश्वास, नैतिक शिक्षा, मनोरंजन और ऐतिहासिक जानकारी भी है, इसीलिए पंडवानी आज भी समय युगोन बनी हुई है। अपने परम्परागत सौन्दर्य भाव और प्रमाणिकताा के कारण पंडवानी लोकगाथा ने भारत और अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर भी अपनी पहचान बनाई है, पंडवानी की प्रसिध्दी ने कलाकारों के लिए रोजगार की संभावनाएँ भी तलाशी है।

वर्तमान में लोकगाथा पंडवानी की लोकप्रियता कम होती हुई दिखाई देती है तीजन बाई, ऋतु वर्मा, शांति बाई चेलक ने पंडवानी का खूब प्रचार–प्रसार किया मगर आज पंडवानी मात्र सरकारी आयोजनों और कुछ रंग संस्थाओं में प्रस्तुति तक ही सीमित दिखाई देने लगी है। तीजन बाई के बाद अब कौन है जो इस परम्परा को आगे लेकर जायेगा, ऐसे प्रश्न उठने लाजमी है और भविष्य को लेकर सम्भावनाएँ तलाशना जरूरी भी। इस दिशा में समय रहते कोई कारगर कदम नही उठाया गया तो लोकगाथा पंडवानी अपनी पहचान खो देगी।

कुछ ऐसी सम्भावनाएँ है जो पंडवानी के विकास में कारगर साबित हो सकती है, जिसे हम निम्नानुसार समझ सकते है–

(1) पंडवानी में प्रयोग की सम्भावनाएँ ।

(2) रंगमंची प्रयोग।

(3) भविष्य के लिए संरक्षित करना।

(1) पंडवानी में प्रयोग की सम्भावनाएँ :–

परिवर्तन प्रकृति का नियम है और यह बात लोकगाथा पंडवानी पर भी लागू हाती है, परिवर्तन और प्रयोग ही पंडवानी की खासियत है, जो कला जितनी लचीली होगी उसमें प्रयोग की सम्भावनाएँ भी उतनी होगी यही लचीलापन पंडवानी में प्रयोग की अनंत सम्भावनाओं को खोलती हुई दिखाई देती है। झाडू राम देवांगन ने भावमय अभिनय को पंडवानी के प्रमुख तत्व के रूप में जोड़ा, तीजन बाई ने समूचे मंच को महाभारत का मैदान के रूप में स्थापित किया तथा अपने व्यक्तव्य में समय युगीन समस्याओं को शामिल किया।

पंडवानी में कुछ ऐसे प्रयोग हुए है जिसमें एक से अधिक गाथाकारों ने एक साथ एक ही मंच में आमने सामने बैठ कर प्रस्तुति दिया है। कलाकारों को अलग–अलग प्रसंग दे दिए जाते और नाटक की ही तरह एक के बाद एक कलाकार अपने प्रसंग प्रस्तुत करते और कभी–कभी एक ही प्रसंग में एक साथ दो गाथाकार को भी शामिल कर लिया जाता, जिसमें एक कथाकार कभी भीम का संवाद बोलता है तो दूसरा दुर्योधन का। इस तरह देखे तो पंडवानी एकल पात्रिय परम्परा से बहु पात्रिय परम्परा की ओर अग्रसर करती है। कुछ समय से ऐसे प्रयोग लगातार देखने को मिल रहे है जिसमे एक से अधिक कथाकार होते है, मगर आज भी पंडवानी में एकल पात्रिय कलाकारों की संख्या अधिक है।

इस सन्दर्भ में पी.सी. लाल यादव एक आलेख में चर्चा करते है – ''पंडवानी गायन के स्वरूप में एक प्रकार का परिवर्तन दृष्टिगोचर होने लगा है, वह है पंडवानी की जुगल बंदी। एक दल द्वारा स्वतंत्र पंडवानी गायन के स्थान पर दो पंडवानी दल एक ही मंच पर आमने सामने बैठकर प्रतिद्वंद्वो के रूप में पंडवानी गायन करते है। बिलकुल कव्वाली की तरह। ..... पंडवानी गायक क्रमशः कथा को आगे बारी–बारी से बढ़ाते है। इस तरह का प्रयोग विगत चार–पांच वर्षो से भिलाई इस्पात संयंत्र भिलाई

द्वारा आयोजित छत्तीसगढ़ी लोक कला महोत्सव में किया जा रहा है।''3 इस तरह का प्रयोग भविष्य में नई संभावनाए तलाशने जैसा है और कितनी ही मंडलिया इनसे प्रभावित होकर कथाकारों को एक साथ एक ही मंच में प्रस्तुत करेंगी।

पंडवानी को प्रभावी बनाने के लिए लगातार नवीन प्रयोग होते रहे है इस क्रम में उषा बाई बारले का कार्य सराहनीय है उन्होने अपने रागी के साथ मिलके स्त्री और पुरूष पात्रों के संवाद बाट लिए, पुरूष पात्र के संवाद रागी को दे दिया और स्त्री पात्र का संवाद स्वयं प्रस्तुत करने लगी। यह प्रस्तुति बिलकुल नाटक की तरह ही था तथा ऐसी परिकल्पना पंडवानी और रंगमंच की दूरी को भो कम करती है देखने से ऐसा लग रहा था पंडवानी लोकगाथा न होकर लोक नाट्य हो। उदाहरण स्वरूप –

उषा बाई – ''करन तोला यकीन नईहे बेटा तो ये दे मैं ये ला पहिर डरेंव बेटा। जनम देंव लेकिन थन धर के तोला गोरस नई पियायेंव बेटा, आना मोर गोदी में सुन्दर बइठ हजा करन। सुन्दर मोर दूद ल पीले करन। आ करन आ बेटा।

रागी – आजे दाई ओ सचमुच माता जानेव मईया सचमुच ते मोर माता आस माँ।

उषा बाई – सच में करन

रागी – गोरस मोला पिया देबे ओ मईया।

उषा बाई – पीले करन, दूद पीले बेटा पीले मोर लाल।

रागी – माँ

उषा बाई – हाँ करन

रागी – मोला गोरस पिला दे माँ। माँ के गोरस कइसन हावे आज तक नई पीये हवं माँ।

षा बाई – पीले करन दूद पीले बेटा। आज बड़ा आनंद के साथ अपन बेटा

---

(3) डॉ. यादव पी.सी. लाल, पंडवानी कथा–गायन का बदलता हुआ स्वर पत्रिका कला सारभ पृष्ठ क्र. 76

उ करन ल बड़ा सुन्दर थन पकड़ा के गोरस पियावत है। करन तोला पियावत–पियावत समझावत हँव।''4

उषा बाई और रागी जिस–जिस प्रसंग में संवाद ज्यादा होते है उसे आपस में बाट लेते। इसे पंडवानी का नाटकीय रूपांतर कहा जा सकता है तथा यह प्रयोग पंडवानी को कौन सा नया रूप देगा यह आने वाला समय ही बतायेगा। मगर आधुनिक समय में इस तरह का प्रयोग सही जान पड़ता है, क्योकि आज बाजार–वाद काफी हावी हो चला है सिनेमा और टीवी ने लोककला को काफी प्रभावित किया है। टेक्नोलाजी लगातार अपना आकार बदलते रहते है इंटरनेट के आ जाने से प्रतिस्पर्धा और बढी है और पूरा विश्व मोबाईल में समाहित हो गया है, तो फिर पंडवानी जैसी लोककला में नवीन प्रयोग को गलत नही कहा जा सकता, जरूरत है प्रयोग को सही आकार देने की, आलोचकों को आलोचना करने तक सीमित नही रहना चाहिए बल्कि नइ सम्भावनाओं को प्रोत्साहित करने की भी उन्हें जरूरत है।

आधुनिक समय में लोककला के रूप को काफी छोटा कर दिया है आज किसी के पास इतना समय नहीं की रात–रात भर पंडवानी देखे या लगातार 18 दिनो तक पंडवानी की प्रस्तुति को सुने। लोक कलाकारों को वर्तमान आधुनिक परिवेश के अनुसार अपनी प्रस्तुति को धारदार करने की जरूरत है। इस आधार पर उषा बाई बारले का प्रयास सराहनीय लगता है।

(2) रंगमंची प्रयोग :–

लोकगाथा का प्रयोग रंगमंच में हमेशा से होता आया है एक तरह से लोकगाथा और रंगमंच एक दूसरे को संजोने का काय करता आया है। लोकगाथा के प्रयोग के सम्बन्ध में डॉ. योगेन्द्र चौबे देवेन्द्र राज अंकुर से साक्षात्कार के दौरान लोक गाथा के सन्दर्भ में कहते है– ''स्वाभाविक

---

(4) डॉ. यादव पी.सी. लाल, पंडवानी कथा–गायन का बदलता हुआ स्वर पत्रिका कला सौरभ पृष्ठ क्र. 74

है, इतने वर्षो से लोकगाथाओं की प्रस्तुति हो रही है, अगर उनमें प्रभावित करने की क्षमता नही होती तो यह कैसे संभव होता। आज तो आधुनिक रंगमंच में भी एकल अभिनय की परम्परा चल पड़ी है, यह लोकगाथाओं का ही प्रभाव है। आज के एकल अभिनय वाल रंगमंच में बिना किसी वाद्ययंत्र, संगीत, सैट्स के प्रयोग हो रहे है। यह प्रेरणा तो उन्हें लोक रंगमंच स मिली। इनमें से कोई शास्त्रीय रूपों की ओर गये कोई लोक रूपों की ओर गये और एक नया रास्ता तलाशने की कोशिश हो रही है अजय कुमार उन्ही में से एक है।''5 छत्तीसगढ़ी लोकगाथाओं का प्रयोग रंगमंच में लगातार किया गया और इसके परिणाम स्वरूप कुछ लोकगाथाएँ 'लोकनाट्य' के रूप में स्थापित हो गई, उदाहरण स्वरूप चंदैनी गोंदा जो आज परिष्कृत होके लोकनाट्य का रूप धारण कर चुकी है।

नाचा शैली का प्रयोग छत्तीसगढ़ो रंगमंच में सबसे अधिक हुआ है तथा नाचा लोकनाट्य शैली के रूप में उभर कर सामने आया है। नाचा की ही तरह लोक गाथा पंडवानी का भी प्रयोग रंगमंच में किया जाने लगा और इसे सबसे पहले हबीब तनवीर ने अपने नाटकों में प्रयोग किया इसके बाद और भी निर्देशकों ने अपने नाटकों में लोकगाथा पंडवानी शैली को खेला, मगर फिर भी पंडवानी रंगमंच से दूर ही दिखाई पड़ती है। नाचा की तरह पंडवानी में नाट्य तत्व प्रचूर मात्रा में दिखाई पड़ते है इसलिए पंडवानी का रंगमंचीय प्रयोग सफल भी रहा।

सफलताओं और प्रयोग के बाद भी पंडवानी को लेकर निर्देशक की बेरूखी ही दिखाई देती है मगर इसका यह मतलब कतई नही की भविष्य में इसकी रंगमंचीय सम्भावनाये नहीं तलाशी जा सकती। पंडवानी के संरक्षण के लिए और इसकी प्रसिध्दी को बनाये रखने के लिए रंगमंचीय प्रयोग लगातार करने की आवश्यकता दिखाई पड़ती है।

---

(5) डॉ. चौबे योगेन्द्र, आधुनिक रंगमंच में छत्तीसगढ़ी लोकगाथा का अभिनय एवं संगीत पक्षः एक अध्ययन पृ. क्र. 338

त्रिपुरारी शर्मा और शांति बाई चेलक के साथ पंडवानी में रंगमंचीय सम्भावनाएं तलाशते हुए ।

शाति बाई चेलक राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय के बच्चों के साथ पंडवानी गायन के प्रशिक्षण देते हुए

(3) भविष्य के लिए संरक्षित करना :–

पंडवानी को भविष्य में संरक्षित करने के लिए नई सम्भावनाएँ तलाशनी होगी क्योंकि समय के साथ पंडवानी मंडलियों की संख्या कम हा रही है। झाडू राम देवांगन के बाद तीजन बाई और ऋतु वर्मा ने इसे संरक्षण देने का कार्य किया अब आने वाले समय में तोजन बाई और ऋतु वर्मा की परम्परा को आगे ले जाने के लिए नए कलाकारों की तलाश जरूरी हो गई है। तीजन बाई अपने साक्षात्कार के दौरान कहती है– मैं अपनी कार्यशाला में 200 कलाकारों को तैयार कर रही हूँ इस वर्कशॉप में नई प्रतिभा को खोजने का कार्य मेरे मार्गदर्शन में किया जा रहा है। जिसके परिणाम स्वरूप मंजू बाई रामटेके जैसे कलाकार निखर के सामने आ रहे है।

कलाओं को संरक्षित करने का कार्य सरकार आर आम जन दोनो का है मगर सरकार और दर्शक पंडवानी जैसे कलाओं को देखने के लिए समय नहीं निकाल पा रहे है, पंडवानी कला को प्रोत्साहन देने की जरूरत है वही सरकारी आयोजन में लोक कलाकारों की अनदेखी स्पष्ट दिखाई देती है छत्तीसगढ़ स्थापना दिवस सरकार द्वारा सनिलिओनि, हिमेश रेशमिया, बप्पी लेहरी, और हनी सिंग जैसे कलाकारों को करोड़ों रूपये एक दिन का देती है जबकि पंडवानी लोकगाथा के कलाकारों को हजार रूपए के लिए भी मोल भाव करना पड़ता है और कभी–कभी लोक कलाओं को मंच भी उपलब्ध नहीं हो पाता। वैसे तो कला अमूल्य है जिसका कोई मूल्य नहीं चुका सकता, मगर कलाकारों को रोजी रोटी की आवश्यकता होती है और यही कला उनके रोजगार का माध्यम है अगर इन कलाकारों से रोजी रोटी ही छीन लिया जाए तो पंडवानी लोकगाथा को संरक्षण कैसे दिया जा सकता है और इस तरह का आयोजन कलाकारों के प्रोत्साहन को कम करने का काम करती है।

शान्ति बाई चेलक साक्षात्कार के दौरान कहती है' ''पहले की बात की जाए तो पहले 18 दिनों तक एक ही गाँव में पंडवानी कार्यक्रम

किए जाते थे। किसी उत्सव या समारोह के आने पर गाँवों के लोग पंडवानी गायन के लिए बुलाते थे लेकिन आज यह शैली लुप्त होती जा रही है, आज लोक संगीत और गायन को कोई पसंद ही नही करता अगर यही हाल रहा तो भविष्य में यह पूरी तरह लुप्त हो जाएगी।... हमने पंडवानी कार्य शाला बना रखी है यहाँ हम बालक बालिकाओं को पंडवानी का प्रशिक्षण दे रहे है साथ ही साथ अगर सरकार इसे प्रोत्साहित करती है तो पंडवानी को लुप्त होने से बचाया जा सकता है। लोककलाओं को जितना सम्मान मिलेगा, वह उतनी ही ज्यादा फलेगी। यदि सरकार और समाज की ओर से कोई प्रोत्साहन नहीं मिलता तो मै और मेरे साथी कलाकार मरते दम तक इसे जिन्दा रखेंगे।''6 यह एक कलाकार ही कह सकती हे की मरते दम तक मैं अपने कला को जिन्दा रखूंगी और इसे आगे लाने के लिए प्रयास करूँगी। किसी भी कला को जिन्दा रखने के लिए सभी वर्गों की भागेदारी अपेक्षीत है न की उस विधा से जुड़े कलाकार की वो तो अपनी तरफ से प्रयास कर रहे है।

पंडवानी में अनंत सम्भावना है यह हमारे ऊपर है हम उसे कितना समझते है और इस विधा को लेकर कितनी संभावनाएँ तलाशते है। प्रयोग हो रहे है और होते रहेंगे, जरूरत इस बात की है की पंडवानी कलाकार, रंगनिर्देशक और सरकार साथ मिलकर काम करे जिससे इस दिशा में और संभावनाएँ निकलकर सामने आए।

---

(6) टी.एम न्यूज पृ. क्र.3

भविष्य के लिए संभावनाएँ तलाशते हुए

बच्चो के साथ पंडवानी गायन करते हुए

———000———

उपसंहार

भारत के सभी प्रदेशों में लोकगाथा की परंपरा देखने को मिलती है और इन सभी लोकगाथाओं की अपनी एक विशेषता भी है चूंकि सामान्य रूप से इन सभी में नाट्य तत्व अनिवार्य रूप से मौजूद है, अतः प्रस्तुति को प्रभावी रूप देने के लिए नाटकीय अभिव्यक्ति आवश्यक है। प्रस्तुति में नाटिकता होने के कारण यह निरर्थक व बोझिल होने लगती है और दर्शक वर्ग को अधिक समय तक बांधे रखना कठिन हो जाता है।

भारतीय लोकगाथाओं में नाटकीय अभिव्यक्ति की बात की जाए तो पंडवानी का नाम सबसे उपर आता है। यह अपनी नाटकीय अभिव्यक्ति के कारण दर्शकों को रात–रात भर बांधे रखती है जिसका श्रेय उनके कलाकारों को ही जाता है। कलाकार लगातार प्रयोग करते रहे जिसके कारण पंडवानी का स्वरूप आकर्षित व दर्शनीय हो गया।

पंडवानी को प्रदेश में स्थापित करने का श्रेय 'देवार व परधान' जातियों को दिया जाता है, मूल रूप से इन्ही जातियों द्वारा पंडवानी गायन किया जाता रहा। 19 वीं शताब्दी के बाद अन्य जातियों के लोगों ने पंडवानी गायन की शुरूआत की जिसमें तेली, वर्मा, निषाद, देवांगन आदि जातियां हैं। वर्तमान में विभिन्न जातियों के लोगों द्वारा पंडवानी गायन किया जा रहा है।

पंडवानी की दो शैली है, वैदिक और कपालिक। शास्त्र के अनुरूप वैदिक को लिया जाता है, जिसमें सबल सिंह चौहान द्वारा हिन्दी अनुवादित महाभारत है इसी ग्रन्थ का आधार लेकर कलाकार अपनी प्रस्तुति देते हैं तथा टी वी सीरियल व फिल्म

देखकर भी अपनी तैयार करते है इसके प्रभाव स्वरूप अधिकतर कलाकार वर्तमान में वैदिक शैली में ही अपनी प्रस्तुति देते हैं। कपालिक शैली के कलाकार पीढ़ी दर पीढ़ी चली आ रही कथा परंपरा को सुनकर तथा लोक विश्वास को आधार मानकर अपनी कल्पना अनुसार प्रस्तुति करते हैं। इसके अलावा बहुत से कलाकारों को जानकारी न होने के कारण बैठकर प्रस्तुति देने वाले कलाकारों को वैदिक शेली व खड़े होकर प्रस्तुति देने वालों को कपालिक शैली कहते हैं, लेकिन यह उचित जान नही पड़ता, ये कलाकार के ऊपर निर्भर करता है कि वह खड़े होकर प्रस्तुति देगा या बैठकर। चूंकि खड़े होने व बैठने से कल्पना और शास्त्र का कोई सम्बन्ध नही है।

पंडवानी का संगीत पक्ष छत्तीसगढ़ी लोक संगीत धुनों के अनुरूप होता है। एक ही धुन को कई गीतों के साथ पिरोया जाता है तथा इसकी शब्द रचना छत्तीसगढ़ी संस्कृति का प्रतिनिधित्व करती है। प्रस्तुति के दौरान रागी और कथाकार के बीच जुगलबंदी देखने को मिलती है, जिसे नाट्य संगीत भी कहा जा सकता है। दर्शक वर्ग, 'रागी व कलाकार' के जुगलबन्दी से मनोरंजित होते रहते हैं। इस तरह हम इसे पंडवानी संगीत की नाटकीय अभिव्यक्ति कह सकते हैं, क्योंकि यह नाटक के रंग संगीत की ही तरह है और इसकी प्रस्तुति भावाभिनय से निपुण होती है। पंडवानी का संगीत पक्ष समय के साथ सशक्त हो रहा है।

पंडवानी में किसी विशेष वेशभूषा की आवश्यकता नही होती, कलाकार छत्तीसगढ़ी (ग्रामीण व शहरी) पहनावे के अनुरूप वेशभूषा धारण करते हैं, पंडवानो में कुछ कलाकारों की वेशभूषा व आभूषण आकर्षक दिखाई देती है। इस आधार पर देखें तो तीजन बाई की वेशभूषा विशेष है, उनका श्रृंगार अभिनय को अधिक प्रभावी बनाता है कर्णफूल, हमेल माला, हसुली, रूपया

माला, नथनी, लवंग, कड़ा, नागमोरी, करधन व रूनझुन आदि आभूषणों के माध्यम से हर एक पात्र को मंच पर उभारती है। कभी उनके कानों के कुण्डल कर्ण की प्रति प्रतीत का आभास करता है तो कभी हाथों के कड़े को घूमते हुए भीम के रूप में परिलक्षित होती है। इस तरह पंडवानी के कलाकारों की वेशभूषा विशिष्टता लिए हुए है।

जिस स्थान पर कलाकार अपनी कला को प्रस्तुत करता है, उसे मंच कहते हैं, यह पेन्टिंग के केनवास की तरह है जहां कलाकार की कला के विभिन्न रूप उभरकर आते हैं। नाट्य शास्त्र में मंच को तीन आकार में बांटा गया है, ज्येष्ठ, मध्य और अवर। इन तीनों ही आकार के मंच में पंडवानी की प्रस्तुति की जा सकती ह फिर भी पंडवानी की प्रस्तुति के लिए किसी विशेष आकार के मंच की आवश्यकता नही होती चूंकि इसकी संरचना ही ऐसी है, जिसे किसी भी स्थान में खेला जा सकता है। वस देखा जाए तो पहले पंडवानी घर के आंगन, गली चौराहे और बाजार के भीड़–भाड़ जैसे स्थानों में प्रस्तुत किया जाता था। इन कलाकारों में इतनी क्षमता होती है कि किसी भी स्थान को मंच के रूप में स्थापित कर सके। पंडवानी का व्यवसायिक करण होने स पारंपरिक मंच में भी प्रस्तुति होने लगी जिसमें एक साथ हजारों लोग गाथा को सुन व देख सकते थे। आधुनिक समय में पंडवानी को किसी भी मंच पर खेला जा सकता है।

नाटक में पात्रों के माध्यम से कथा कहते हैं बिना पात्र के नाटक सम्भव ही नही है। इस दृष्टि से देखें तो पात्र नाटक के प्राण है। नाटक बहुपात्रिय माध्यम है और इन पात्रों का निर्वहन करने के लिए एक से अधिक कलाकारों की आवश्यकता होती है। नाटक को एकल माध्यम से भी प्रस्तुत किया जाता है, जिसमें एक ही कलाकार सभी पात्रों की भूमिक अदा करता है। नाटक की ही तरह पंडवानी को भी एकल माध्यम से ही प्रस्तुत

किया जाता है, पंडवानी क कथानक मं पात्रों की संख्या सौ से अधिक है, और हर एक पात्र अपनी विशेषता लिए हुए है इन पात्रों के बीच द्वन्द्व चलता रहता है, और पंडवानी कलाकार इन सभी पात्रों को एकल माध्यम से प्रस्तुत करता है। अतः इसी दृष्टिकोण से पंडवानी को नाट्य कहा जा सकता है।

आधुनिक समय में संवाद नाटक की सफलता व असफलता का निर्धारण करते हैं। संवाद भाषा रूप में सम्प्रेषण का सर्वश्रेष्ठ तत्व है, चाहे वह लोक नाट्य हो या लोकगाथा। लोक नाट्यों में संवाद कलाकारों के मुख से फूट पड़ते है। लोकनाट्य की ही तरह पंडवानी कलाकार संवाद योजना में दक्ष है, उनके एक–एक शब्द चमत्कारिता उत्पन्न करते हैं। नाटक की ही तरह पंडवानी में संवाद छोटे व बड़े आकार में होते हैं। गाथाकार जिसे संकेत वाक्यों का आधार लेकर प्रस्तुत करते हैं। संकेत वाक्यों का प्रयोग नाटक के आरंभ, मध्य (बीच– बीच में) व नाटक को पूर्ण करने के लिए किया जाता है, यह परम्परा लोक गाथा से ही ली गई है। नाटक हो या लोकगाथा, संकेत वाक्यों का प्रयोग प्रसंग को आगे बढ़ाने के लिए किया जाता है। यह गाथाकार पर निर्भर करता है, कि संकेत वाक्य और संवाद का प्रयोग कैसे किया जाए। इस आधार पर देखें तो पंडवानी व नाटक दोनों में ही संवाद योजना सामान्य रूप से देखने को मिलता है जो नाट्य तत्व की ओर इंगित करता है।

कला के किसी भी प्रारूप में प्रस्तुति के लिए सबसे प्रबल माध्यम अभिनय ही है। छत्तीसगढ़ी लोक कलाओं में अभिनय की प्रधानता हमेशा से रही है, लोकगाथा पंडवानी में तो अभिनय ही उसकी विशेषता है, जिसमें गाथाकार को एक से अधिक पात्रों का अभिनय करना होता है, एक एक शब्द को अभिनय से जीवन्त रूप दिया जाता है। अभिनय के माध्यम से ही गीतों के भाव को स्पष्ट किया जाता है। द्रोपती की पीड़ा को दिखाने के लिए

भावाभिनय ही एक माध्यम है। अभिनय के माध्यम से ही दर्शकों से सीधा संवाद स्थापित किया जाता है, रात–रात भर दर्शकों को बांधे रखने का कार्य अभिनय ही कर सकता है। चूंकि पंडवानी एकल माध्यम से प्रस्तुत की जाती है इसलिए कलाकार को अभिनय में पारंगत होना चाहिए।

और यही अभिनय की खूबी पंडवानी को अन्य लोकगाथाओं से विशिष्ट बनाती है। अभिनय के श्रेष्ठ उदाहरण में तीजन बाई और झाडूराम देवांगन है। अतः पंडवानी के अभिनय पक्ष को जितना विश्लेषित किया जाए उतना ही कम है। कलाकारों के अभिनय को शब्दों में नही बांधा जा सकता।

जिस प्रकार व्यंजन पकाने वाले को रस की अनुभूति नही होती, उसे चखने वाले को रस की अनुभूति, उसी प्रकार कलाकार जो अपनी कला का प्रदर्शन करता है उसे रस की अनूभूति नही होती बल्कि उसे देखने वाले दर्शक को रस की अनूभूति होती है। अलौकिक आनन्द की अनुभूति ही 'रस' कहलाती है, यह अनुभूति दर्शकों को पंडवानी की प्रस्तुति में भी होती है। नाट्य शास्त्र के आठों रसों का प्रयोग पंडवानी में देखने को मिलता है। पंडवानी में प्रमुख रूप से वीर, रौद्र विभत्स, भयानक, अद्‌भुत, करूण की प्रधानता है, किन्तु इसके अलावा श्रृंगार, व हास्य कुछ एक प्रसंग में देखने को मिल जाते हैं। अतः पंडवानी कलाकार अपने कलात्मक कौशल से गाथा में मौंजूद सभी रसों का निर्वाह करके दर्शकों को रसानुभूति करते हैं।

रंगमंच में लोकगाथा का प्रभाव स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। सूत्रधार, गाने, कोरस और संकेत वाक्यों को प्रयोग रंगमंच में लोकगाथा से ही आया है, रंगमंच में हमेशा से कथा कहानी ओर लोकगाथा का प्रयोग होता रहा है। उदाहरण स्वरूप बहादुर कलारिन, लोरी चंदा, महाभारत के कथानक को रंगमंच में खेला

गया है, हबीब तनवीर, बंशी कौल, बाबा कारंत, वामन केन्द्रे आदि निर्देशकों ने लोक कथाओं, लोकगीतों और लोक शैलियों का प्रयोग करके प्रसिद्धि पाई है।

पंडवानी शैली का प्रयोग रंगमंच में हमेशा होता रहा है, सबसे पहले हबीब तनवीर ने पंडवानी शैली का प्रयोग 'अर्जुन का सारथी' में किया, इसके बाद मिर्जा मसूद, शान्ता गांधी, त्रिपुरारी शर्मा, राजकमल नायक जैसे निर्देशकों ने रंगमंच में पंडवानी शैली का प्रयोग किया। चूंकि नाचा के समान पंडवानी कलाकार भी दर्शकों से सीधा संवाद और इम्प्रोवाइजेशन की क्षमता देखने को मिलती है। पंडवानी का प्रयोग भानुमति में हुआ इसमें भानुमति को द्रोपती से जोड़कर प्रस्तुत किया गया। वेणीसंहार, कर्णभारम में भी पंडवानी का प्रयोग हुआ है। अन्य लोक शैलियों की तहर पंडवानी शैली का भी प्रयोग रंगमंच में इसी तरह होता रहा।

लोकगाथा पंडवानी में प्रयोग की अनंत संभावनाएं है चूंकि इसमें आरंभ से लेकर वर्तमान तक लगातार प्रयोग हुए हैं प्रयोग ने इसे दो शैलियों में बांटा है, ऐसी बहुत कम लोकगाथा है जिसकी प्रस्तुति की दो शैलियां हो, प्रस्तुति को प्रबल रूप देने के लिए समय–समय पर नाट्य तत्व जुड़ते गए। रागी, हुंकार भरने वाला और नाटक के समान ही पात्रों को सजीव चित्रण दिया गया, मंच में एक साथ, एक दो या दो से अधिक कथाकारों को प्रयोग के रूप में लिया गया। ऐसा ही प्रयोग पंडवानी शैली को लेकर रंगमंच में भी किया गया। पंडवानी में जितना प्रयोग किया जाएगा उतनी ही नई संभावनाएं निकलकर सामने आएगी।

बदलते परिवेश में पंडवानी का प्रारूप भी बदला है, आज प्रस्तुति में बाजार हावी दिखाई देता है। यह बाजार का ही प्रभाव है कि पंडवानी सांस्कृतिक मॉडल की तहर स्थापित होती जा रही है। फिल्मी धुनों का प्रयोग भी होने लगा है। छत्तीसगढ़ी भाषा व

संस्कृति कहीं धूमिल होती जा रही है। प्रयोग के नाम पर पंडवानी में अतिरंजना देखने को मिल रही है।

लोकगाथा पंडवानी में नाट्य तत्व प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है, और इन तत्वों को जितना विश्लेषित किया जाए उतना ही कम है, प्रस्तुति में नाट्य तत्व होने के कारण आप इसे लोकनाट्य भी कह सकते हैं। या लोकगाथाा। यह देखने व समझने वाले के दृष्टिकोण पर निर्भर करता है। यह मान सकते हैं कि पंडवानी रंगमंच की ही तरह है जिसमें गीत, संगीत, नृत्य, संवाद अभिनय और सामाजिक अभिव्यक्ति उजाग्रित होती है।

———000———

मिर्जा मसूद से साक्षात्कार

(वरिष्ठ रंगकर्मी तथा भूतपूर्व ऑल इंडिया रेडियो के प्रवक्ता)

प्रश्न :– अभिनय के दृष्टिकोण से पंडवानी को आप कैसे देखते है?
उत्तर :– अभिनय के दृष्टिकोण से पंडवानी को छत्तीसगढ़ का प्रथम पाठशाला कहा जा सकता है इसमें गाथाकार परकाया प्रवेश करता है कभी भीम है तो कभी अर्जुन तो कभी कृष्ण इस दृष्टिकोण से देखे तो पंडवानी में अभिनय की अनंत सम्भावना है।

प्रश्न :– क्या आपने अपने नाट्य निर्देशन में पंडवानी शैली का प्रयोग किया है?
उत्तर :– हाँ किया है मैने डॉ. धर्मवीर भारती द्वारा लिखित नाट्य अन्धायुग में एक कलाकार को लेकर पूरे नाटक को पंडवानी शैली में ही प्रयोग किया, जिसमें गीत जीवन यदु ने लिखा, इसकी प्रस्तुति हमनें राजनाँदगाँव व रायपुर में दिया।

प्रश्न :– आप पंडवानी शैली को कैसे देखते है और इनकी दोनों शैलियों में क्या अंतर है?
उत्तर :– कापालिक वाले खड़े होकर प्रस्तुत करते है और वेदमती वाले बैठकर प्रस्तुति देते है। कापालिक शैली की विशेषता है कि वो कुछ स्थानीय पत्रों को शामिल कर लेते है जो हमे महाभारत की मूल कथा में दिखाई नही देते। वेदमती में शास्त्र सम्मत होने के कारण उसमें कोई उतनी गुन्जाईश नहीं होती। तीजन बाई के प्रस्तुति में ऐसे बहुत सारे पात्र है जो महाभारत में देखने को नही मिलते, क्योंकि वो कापालिक शैली में गाती है लोक पत्रों को अपनी प्रस्तुति में लाने में उनका खुदका योगदान है और यही उनकी विशेषता है।

प्रश्न :– वेदमती क्यों कहते है?
उत्तर :– वेदमती का मतलब है महाभारत के रचयिता वेद व्यास इसलिए, वेदमती कहते है।

प्रश्न :– आप रंगमंच में पंडवानी का योगदान कैसे देखते हो?
उत्तर :– हबीब तनवीर ने पंडवानी को खेला और समय समय पर बहुत से छत्तीसगढ़ के नाट्य निर्देशकों ने पंडवानी का प्रयोग रंगमंच में किया है।

प्रश्न :– भविष्य को लेकर पंडवानी में कितनी सम्भावना है क्या पंडवानी सरकारी आयोजन तक सीमित होते जा रही है?
उत्तर :– नाचा का प्रयोग सरकारी आयोजन में किया जाता रहा है, लेकिन नाचा की खासियत है उसमें कितनी भी विकृति आय वह घूम फिर के अपने मूल रूप में आ जाती है लेकिन पंडवानी में ऐसी कोई सम्भावना नही है, पंडवानी प्रस्तुति की अपनी एक शैली है अगर ये विकृत होती है तो अपने मूल रूप में आना कठिन होगा और मुझे लगता है पंडवानी को सरकारी आयोजन के लिए नही लिया जाना चाहिए।

प्रश्न :– रागी की भूमिका क्या है?
उत्तर :– दोनों शैलियों में रागी होता है जो मुख्य गायक के साथ कथा को आगे बढ़ाता है कथाकार को स्पेस देता है, कालांतर में जो रागी होता था वही मुख्य गायक होता था।

(मिर्जा मसूद)

रोशनी प्रसाद मिश्र

युवा रंगकर्मी रोशनी प्रसाद मिश्र से शिशुपाल सिंह का संवाद

प्रश्न :– क्या आपने लोकगाथा का प्रयोग रंगमंच में किया है?

उत्तर :– हाँ मैने 'चंदनुआ' नामक लोकगाथा जो बघेलखण्ड में अहीर जाति के गायकों द्वारा गाई जाती है, को नाट्य रूप में लिखा है और उसका निर्देशन भी किया है जिसकी अब तक 18 प्रस्तुति देशभर के राष्ट्रीय नाट्य महोत्सवों में किया जा चुका है।

प्रश्न :– पंडवानी, छाहुर व चंदनुआ की नाटकीय विशेषताएं कौन सी है? और रंगमंच इससे कैसे प्रभावित है?

उत्तर :– पंडवानी, छाहुर व चंदनुआ की प्रमुख नाटकीय विशेषताए –

लोकगाथाएं चाहे वह पंडवानी हो या फिर चाहे छाहुर या चंदनुआ उनकी अपनी कुछ प्रमुख विशेषताएं होती है जिसके कारण वह नाटकीय होती जाती है। सबसे पहले पंडवानी की बात करते है। मुझे पंडवानी गाथा देखने का कई बार अवसर प्राप्त हुआ। जब भी मैं पंडवानी के संबंध में बात कर रहा होता हूं तो मेरी दृष्टि में तम्बूरे वाली गायिका तीतन बाई जी की तस्वीर नजर आती है, उसका एक कारण यह भी है कि उन्होने पूरी दुनिया में एक गाथा को लेकर अपनी अलग पहचान बनाया जो अप्रतिम है। साथ ही इस गाथा के माध्यम से भारतीय लोक संस्कृति को भी पहचान मिली। जहां बात नाटकीय विशेषताओं की है तो मैं उनके तम्बूरे की तरफ इंगित करना चाहूंगा। गाथा गाते समय उनके हाथ का तम्बूरा, तम्बूरा तो होता ही है उसके साथ–साथ कभी भीम का गदा

बन जाता है तो कभी अर्जुन का धनुष बाण बन जाता है, और वही जरूरत पड़ने पर घोड़े का लगाम भी बन जाता है और दर्शक उसे सहर्स स्वीकार कर लेता है। यही उसकी नाटकीय विशेषता है।

जहां तक छाहुर की बात है तो छाहुर बघेलखण्ड की विशिष्ट वीर गाथा है जो अहीर जाति के गायकों द्वारा गाई जाती है लेकिन यह मंचों में कम ही प्रदर्शित हुई है यानि की यह स्वान्तः सुखाय अधिक है। यह प्रमुख रूप से शादी ब्याह या अन्य उत्सवों के समय गाई जाती है, जो गाथा रूप में कम लोगों तक पहुंच पाई है। हालांकि नरेन्द्र बहादुर सिंह ने इस गाथा को लेकर एक पात्रीय नाटक लिखा और करूणा सिंह के निर्देशन में स्वंय अभिनय भी किया, जो काफी सराहनीय रहा। नरेन्द्र के अतिरिक्त आनंद मिश्र जी ने भी अपने नाट्य दल के साथ इसका नाट्य मंचन किया और सफल रहा पर गाथा के रूप में इसे कम प्रसिद्धी मिली है। जब हम नाटकीय विशेषताओं की बात करते है तो हमे लगता है कि गाथा गायक की गायकी का अंदाज और तेबर ही है जो नाटकीयता प्रदान करता है।

चंदनुआ भी बघेलखण्ड की ही एक सुप्रसिद्ध प्रेमगाथा है जो गाथा के रूप में कम चर्चित रहा लेकिन जब मैने इसे नाटक का आकार दिया और दर्शकों के बीच परोसा तो मुझे प्रबुद्ध जनो से और आम दर्शकों से भी बराबर प्यार और स्नेह मिला। हालांकि यह गाथा चार जीवों के एक साथ जन्म लेने की घटना से शुरू होती है जो अपने आप में नाटकीय है, उसके बाद पंडित का आना और भविष्य वाणी करना कि इस अहीर के लड़के चंदन का और राजा की बेटी गेल्हनी का विवाह सुनिश्चित है। फिर राजा द्वारा चंदन को मरवाने की साजिश करना और चंदन का न मरना फिर से चंदन गेल्हनी

का मिलना, प्रेम होना और ब्याह करना यह प्रमुख नाटकीय विशेषताएं है।

तीनों ही गाथाएं वर्षों पूर्व की है फिर भी आज सम सामयिक है और इसमें जो भी क्रियाकलाप होती है, या जो भी प्रॉप्स इस्तेमाल किए जाते है अधिकतर काल्पनिक होते है जो अधिकांश नाटकों में होता है। इससे हम कह सकते है कि कही न कहीं रंगमंच इन गाथाओं से प्रभावित है।

प्रश्न :– पंडवानी, छाहुर व चंदन्आ को लेकर भविष्य में संभावनाएं कितनी है?

उत्तर :– पंडवानी, छाहुर और चंदनुआ की भविष्य में संभावनाएं

दुनिया गोल है, समय के साथ सबकुछ बदल जाता है, हमारी प्राकृतिक सम्पदाएं (आधार) चाहे पृथ्वी हो चाहे सूरज या चांद सबके सब गोल हैं इससे यह तय है कि समय के साथ सबकुछ बदलता रहता है और पुरानी चीजे नये रूप में फिर हमारे सामने प्रस्तुत होती है, और हम उसे सहृदय स्वीकार कर लेते है। वैसे ही हमारी संस्कृति और कला भी है। एक समय था जब हमारे पास मनोरंजन के लिए कोई साधन नही होते थे तब हमारी लोक (पारंपरिक) कलाएं होती थी जो पूर्णतः स्वान्तः सुखाय होती थी। कलाकार अपने आत्म संतुष्टि के साथ–साथ औरों का मनोरंजन भी करते थे लेकिन टी.वी. आई, सिनेमा आया और धीरे–धीरे पारम्परिक कलाओं का अस्तित्व सिमटता चला गया। आज वर्तमान परिस्थिति को देखा जाय तो यह देखने को मिलता है कि सिनेमा में भी बदलाव आया है और उसके साथ–साथ दर्शकों की दृष्टि भी बदली है। साथ ही रंगमंच में रिकार्डिंग म्यूजिक की जगह लाइव म्यूजिक अर्थात् फोक म्यूजिक का प्रयोग बढ़ा है।

जिसने दर्शकों और रंगकर्मियों दोनो को प्रभावित किया है हालांकि इस तरह के प्रयोग बहुत कम लोग कर रहे है लेकिन आज के इस आधुनिक युग में इसकी मांग को देखते हुए और संस्कृति विभाग की सक्रियता देखते हुए हम कह सकते है कि पंडवानी, छाहुर और चंदनुआ की रंगमंचीय रूप में भविष्य में अपार संभावनाएं बनेंगी।

प्रश्न :– संगीत की दृष्टिकोण से पंडवानी के संगीत को आप कैसे देखते है?

उत्तर :– कोई भी कला मूलतः मनोरंजन के लिए हुआ करती है। संगीत में गायन, वादन और नृत्य तीनों चीजें समाहित होता है। एक संगीत मनोरंजन के साथ–साथ समाज के संदेश भी देता है। जब हम किसो लोक नाटक या गाथा का संगीत सुनते है तो उसमें अभिनय की महत्ता अधिक दीख पड़ती है और संदेश देना महत्वपूर्ण होता है, जो पंडवानी के संगीत में भी देखने को मिलता है। अगर हम यह भुला दें कि यह एक गाथा या लोक नाटक है और यह मान के चलें कि यह संगीत ह तो भी यह अन्य संगीत से कम नही जान पड़ता। और बिना देखें सुनकर ही श्रोता मंत्रमुग्ध हो जाता है या कहें कि वह संगीत में रंग की तरह समाहित हो जाता है।

(रोशनी प्रसाद मिश्र)

डॉ. पी.सी. लाल यादव से शोध प्रश्न करते हुए

प्रश्न :– आप कब से लोक कला को लेकर सक्रिय रूप से काम कर रहे हैं ?

उत्तर :– लोक कला को लेकर 1976 से ''दूध मोंगरा'' गंडई नामक छत्तीसगढ़ी लोक मंच की स्थापना के साथ छत्तीसगढ़ की कला संस्कृति व साहित्य को लेकर कार्य अनवरत रूप से जारी है।

प्रश्न :– शोध कार्य के लिए आपने ''पंडवानी'' विषय का चुनाव क्यों किया ?

उत्तर :– बचपन में पंडवानी सुनने के अनेकों अवसर मिले। तब पंडवानी की कथा बड़ी रोचक और मनोरंजक होती थी। संयोग से हमारे श्वसुर श्री बोधी राम यादव कापालिक शैली की कथा का गायन करते थे। बाद में महाभारत की कथा से परिचित हुआ। दोनों कथाओं की भिन्नता ने शोधकार्य के लिए प्रेरित किया।

प्रश्न :– क्या आपने पंडवानी के अलावा भी किसी अन्य विषय पर लेखन कार्य किया है ?

उत्तर :– हां, छत्तीसगढ़ी लोक साहित्य, लोक कला व लोक संस्कृति पर लेखन कार्य किया है। यथा – छत्तीसगढ़ी संस्कार गीत, छत्तीसगढ़ का डंडा नृत्य गीत, छत्तीसगढ़ की लोक गाथाएं, छत्तीसगढ़ी लोकगीत विविध आयाम, छत्तीसगढ़ी लोक जीवन और लोकपर्व आदि।

प्रश्न :– लोकगाथा क्या है ?

उत्तर :– लोकगाथा कथात्मक गीत है जो अंचल विशेष में स्थानीय लोक परम्पराओं को अपने में समाविष्ट किये वाचिक रूप में गाए जाते हैं। यह लोक की अनुभूत सरल और प्राणमयी कविता है। लोकगाथा लोक का महाकाव्य है।

प्रश्न :– लोकगाथा पंडवानी शैली से आप क्या समझते हैं ?

पंडवानी पांडवों की गाथा है। जो मौखिक रूप से लोक कंठ में व्याप्त है। महाभारत की कथा में उद्‌भूत किन्तु लोक वैशिष्ट्य के कारण इससे भिन्न है। इसकी दो शैलियां प्रचलित है 1. कापालिक शैली एवं 2. वेदमती शैली। कापालिक शैली में काल्पनिक कथाएं गायी जाती है जो छत्तीसगढ़ी लोक जीवन से जुड़ी हुई होती है। वेदमती शैली की कथा महाभारत (रचियता श्री सबल सिंह चौहान के आधार पर गायी जाती है)

प्रश्न :– पंडवानी और नाटक में अंतर्संबंध किस प्रकार से है ?

पंडवानी लोकगाथा है, जिसमें कौरव–पांडव की सुदीर्घ गाथाएं गायी जाती है। नाटक अलग ही विधा है, जिसमें किसी विषय को लेकर नाटक मंचित होता है। इसमें अभिनय तत्व की प्रमुखता होती है। पंडवानी गायन में भी अभिनय तत्व परिलक्षित होता है। अभिनय तत्व पंडवानी की विशेषता है।

प्रश्न :– नाटक की अपेक्षा पंडवानी में संवाद योजना कैसी होती है ?

उत्तर :– नाटक में विषय अनुरूप अनेक पात्र होते हैं जिनमें संवाद अदायगी हेाती है। किन्तु पंडवानी गायन में कथा गायक या गायिका अवसरानुकूल विभिन्न पात्रों के संवादों को बोलते हैं। पंडवानी में रागी की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। रागी की संवाद अदायगी कथा को मनोरंजकता प्रदान करती हुई कथा को आगे बढ़ाती है। पंडवानी गायक या गायिका कभी भीम, कभी अर्जुन, कभी दुर्योधन कभी श्री कृष्ण, कभी द्रौपती तो और कभी अन्यान्य पात्रों को मंच पर अभिनय और संवाद के माध्यम से जीवन्त करते हैं।

प्रश्न :– पंडवानी में प्रयोग की संभावनाएं कितनी व किस आधार पर होनी चाहिए ? पंडवानी को लकर वर्तमान में कौन से नवीन प्रयोग हो रहे हैं?

उत्तर :– कला के क्षेत्र में प्रयोग की अनेकानेक संभावनाएं बनी रहती है। संभावनाओं के आधार पर ही प्रयोग होते हैं। पंडवानी को लेकर एक–दो प्रयोग हुए हैं किन्तु ये प्रयोग सफल नही हुए हैं। चूंकि पंडवानी गाथा गायन है इस लिए इसके प्रयोग की संभावना दिखाई नही पड़ती। मेरी जानकारी में इस पर अभी कोई नवीन प्रयोग नही हो रहे हैं। तम्बूरा, खंजेरी व करताल लोक वाद्यों के स्थान पर हारमोनियम, तबला, ढोलक, बेंजो के प्रयोग की बात अलग है। तम्बूरा स्वर साधने का साधन रूप है।

प्रश्न :– क्या पंडवानी में रंगमंचीय प्रयोग संभव है ? यदि हां तो किन–किन निर्देशकों ने पंडवानी का रंगमंचीय प्रयोग किया है ?

उत्तर :– महाभारत की कथओं को लेकर नाटक रचे गए हैं। परन्तु पंडवानी को लेकर किसी निर्देशक ने प्रयोग किया होगा ऐसी मेरी जानकारी में नही है। मैने पहले ही कहा है कि संभावनाएं तो बनी रहती है। संभावनाओं से इंकार नही किया जा सकता।

प्रश्न :– पंडवानी को लेकर भविष्य में कितनी संभावनाएं है ?

उत्तर :– पंडवानी छत्तीसगढ़ की चर्चित और प्रसिद्ध गाथा गायकी है। यह गांव के चौपाल से निकल विश्व मंच पर प्रतिष्ठित हुई है। आज भी पंडवानी की लोकप्रियता गांवों में है। किन्तु पाश्चात्य प्रभावों ने जिस तरह से हमारी लोक कला और लोक संस्कृति को प्रभावित किया है इन दुष्प्रभावों से पंडवानी भी पीड़ित है। नई पीढ़ी के लोग पंडवानी से दूर हो रहे हैं। चूंकि पंडवानी कलारंजन के साथ–साथ धार्मिक आस्था और आध्यात्म से जुड़ी हुई है। इसलिए ऐसा लगता है यह आगे भी फूलती फलती रहेगी। संभावनाओं का आकाश तो अनंत है।

(डॉ. पी.सी. लाल यादव)

डॉ. योगेन्द्र चौबे से साक्षात्कार

विभागा अध्यक्षः प्रदर्शनकारी कला (थियेटर) मान सिंह तोमर, विश्वविद्यालय गौलियर (म.प्र.)

प्रश्न :– क्या आधुनिक रंगमंच में पंडवानी का प्रयोग नाट्य निर्देशकों ने किया है?

उत्तर :– आधुनिक रंगमंच में पंडवानी का प्रयोग नाट्य निर्देशकों ने किया है सबसे पहले हबीब साहब ने अपने नाटक में इसका बेहतरीन प्रयोग किया। यह कहना गलत नही होगा कि आज दुनिया में जो पंडवानी की स्थिति है उसमें बहुत बड़ा योगदान हबीब साहब का है। स्वयं मैने भी पंडवानी का प्रयोग रतनाकर मत्कारी द्वारा लिखित नाटक बकासुर में इसका प्रयोग किया। एनएसडी की प्रोफेसर त्रिपुरारी शर्मा ने शांति बाई चेलक के साथ नाट्य प्रयोग किया। मिर्जा मसूद और हीरादास मानिकपुरी ने भी प्रयोग किया। ये प्रयोग विशुद्ध रूप से किया गया। हम कह सकते हैं कि आधुनिक रंगमंच में पंडवानी ने अपना योगदान दिया है और रंगमंच को समृद्ध किया है।

प्रश्न :– क्या पंडवानी के संगीत को रंगसंगीत के रूप में प्रयोग किया गया?

उत्तर :– हाँ किया गया पंडवानी के धुनों का भी रंगसंगीत के रूप में प्रयोग किया गया है।

प्रश्न :– क्या पंडवानी को लोकनाट्य कहना सही है?

उत्तर :– पहली बात मुख्य रूप से पंडवानी लोकगाथा है लेकिन इसकी प्रदर्शन शैली की विशेषता को देखते हुए

आजकल इसे नाटक से भी जोड़ देते है पंडवानी को कुछ लोग लोक नाटक की संज्ञा देने लगे है, जो कि गलत है। पंडवानी में अभिनय के पुट अधिक है वाचिक आंगिक सात्विक और आहार्य चारो समान व अनिवार्य रूप स मौजूद है। दूसरी महत्वपूर्ण बात कहानी का होना है। और तीसरी महत्वपूर्ण आशु अभिनय की प्रधानता लगभग नाटक के सभी तत्व मौजूद है।

प्रश्न :– क्या आज पंडवानी मात्र सरकारी आयोजनों तक सीमित होता हुआ नजर आता है।

उत्तर :– छत्तीसगढ़ की लोक कलाओं में पंडवानी अब ग्लैमर युक्त लोक कला बन गई है साथ ही पापुलर भी। यह केवल सरकारी आयोजनों तक सीमित नही है। इसकी संभावना बहुत है यही कारण है कि अब पंडवानी गायकों की संख्या बढ़ी है।

प्रश्न :– आप छत्तीसगढ़ की लोकगाथा को किस दृष्टिकोण से देखते है?

उत्तर :– लोकगीत, लोकगाथा लोककथा, लोकनाट्य हमारे मुहावरे, कहावतें, पहेलियां सब लोक साहित्य है। छत्तीसगढ़ की लोकगाथाएं छत्तीसगढ़ के लोक जीवन एवं संस्कृति का निर्दोष दर्पण है, निर्मल झांकी है। वह लोक साहित्य का अविभाज्य अंग है। इसकी लिखित परंपरा नही है, वह लोक कंठ में निवास करती है। लोक जीवन से वह निरंतर रस ग्रहण करती हुई पुष्ट होती है। इसलिये वह पुरातन होते हुई भी नई है, सतत् गतिशीलता के कारण वह कभी बासी नहीं पड़ती। छत्तीसगढ़ की लोक गाथाओं को समझने के लिये यहां के भूगोल इतिहास लोक जीवन और संस्कृति को जानना जरूरी है।

प्रश्न :– पंडवानी गायन की परम्परा में किन जातियों का योगदान है?

उत्तर :– हजार–डेढ़ हजार वर्ष पूर्व से ये गाथाएं देवार, पारधी, प्रधान, गोंड़, यादव आदि जातियों के कंठ में थी, परंतु पिछले सौ वर्ष से छत्तीसगढ़ी की अनेक जातियां, सतनामी, कुमी, तेली, धोबी भी इसमें भाग लेने लगी, स्वतंत्रता के बाद इसका उत्तरोत्तर विकास हुआ। पंडवानी, लोरिक चंदा, ढोलामारू, भरथरी, दशमत कइना जैसी गाथाएं जिनका अन्य प्रांतों में भी किसी न किसी रूप में प्रचार हुआ दिनो दिन लोकप्रिय होती गई है, कल्पनाशील कलाकारों ने उसमें नये–नये प्रयोग किये। झाडूराम देवांगन, पूनाराम निषाद और तीजन बाई ने पंडवानी को स्थापित ही नही किया बल्कि देश–विदेश में लोकप्रिय बनाया, अब तो शताधिक पंडवानी गायक हो गये है, जिनमें लक्ष्मीबाई बंजारे, शांति चेलक, प्रभा यादव, रितु वर्मा प्रख्यात है। ''वेणी संहार'' हबीब तनवीर की विश्वविख्यात प्रस्तुति का आधार लोकगाथा पंडवानी ही है।

प्रश्न :– छत्तीसगढ़ी लोकगाथाओं में रंगमंचीय दृष्टिकोण से अभिनय संभावनाएँ कितनी है?

उत्तर :– जब हम लोकगाथाओं की रंगमंची प्रयोग की बात करते है तो हमारे समक्ष अभिनय और संगीत पक्ष की बात उभर कर आती है, बगैर इन दोनो के रंगमंच में न तो कविता की प्रस्तुति हो सकती है न कथा कहानी की, न दृश्य रूपकों की और न ही लोकगाथाओं की।

अभिनय का आधार अभिनेता है, वही अभिनय को कार्य रूप में परिणत करता है। छत्तीसगढ़ी लाकगाथाओं का अभिनेता स्वयं गायक होता है स्वयं संगीतज्ञ होता है।

छत्तीसगढ़ के कलाकारों में गजब की अभिनय क्षमता होती है, इसके लिये उन्हें कहीं से प्रशिक्षण लेना नही पड़ता। गांवों में शौकिया शुरू कर लेते है, यह दूसरी बात है इनमें 'विल पावर' भी गजब का होता है, रोते को अपनी वाचिक आंगिक चेष्टाओं से हंसा देना इनके लिये बाएं हाथ का खेल है। दूसरा ये संवाद गढ़ने में भी बेजोड़ होते है।

प्रश्न :– क्या पंडवानी को सामाजिक विषय के साथ जोड खेला जा सकता है? अभी तक ऐसा प्रयोग किसी निर्देशक ने किया है?

उत्तर :– प्रख्यात रंगकर्मी हबीब तनवीर ने पंडवानी पर आधारित वेणी संहार और लोरिक चंदा पर आधारित सोनसागर में स्त्री विमर्श पर एक नया अध्याय जोड़ा है। दुस्शासन ने चीर हरण किया द्रौपती का और द्रौपती ने उसी समय प्रण किया जब तक दुस्शासन के खून से वह सिर नही धाएगा तब तक वह वेणी नही बांधेगी उसके कठोर निर्णय से मानवता थर्राती है, क्या हथियारों की होड़ में मनुष्य इतना बौना है कि वह विषम परिस्थितियों में बदले की आग को नही बुझा सकता? हबीब तनवीर ने इस नाटक के द्वारा संदेश दिया है, युधिष्ठिर के मुख से –

धरती अन्न से परिपूर्ण हो।
युध्द धरती से समाप्त हो।।

जबकि अन्याय पूर्वक मारा जाता हुआ दुर्योधन धरती को ही श्राप देता है –

जा तू कभी रितुमती न हो
तुम में कोई वनस्पति पैदा न हो

और यह श्राप हिरोसिमा और नागाशाकी में आज भी फलीभूत हो रही है। इसो प्रकार हबीब तनवीर ने सोनसागर में कुछ नया किया है, लोरिक चंदा है तो प्रणय गाथा पर

यहां संपत्ति के असमान बंटवारे का प्रश्न भी उठाया गया है। वास्तव में छत्तीसगढ़ की इन लोकगाथाओं में मानवीय संबंधों की विपुल संभावनाएं छिपी हुई है। सजग रंगकर्मी को चाहिय कि वह इनकी जड़ों तक जाए और अन्य गाथाओं को भी रंगमंच में लाए। वेणी संहार, लोरिक चंदा, बहादुर कलारिन, चरणदास चोर में छत्तीसगढ़ के लोकनृत्य संगीत, पहनावा अर्थात संस्कृति के उपकरणों का भरपूर उपयोग किया गया है।

प्रश्न :– पंडवानी की संवाद योजना आर रंगभाषा को आप अपनी दृष्टिकोण से कैसे देखते है?

उत्तर :– रंगभाषा कोई बनी बनाई भाषा नही हो सकती, उसमें ताजगी और सौंदर्य होनी चाहिये वह वाचिक के साथ कायिक, आहार्य और सात्विक अभिनय द्वारा एक साथ उपस्थित होती है, उसमें दर्शक से सीधा संवाद होना चाहिये। रंगभाषा में समूह की ग्रहण शीलता होनी चाहिये, उसका लक्ष्य वर्तमान संदर्भों को ताजी (या वर्तमान) भाषा में प्रस्तुत कर सकने की हो (उसे ही जीवन भाषा कही जाती है) छत्तीसगढ़ी को हिन्दी अंग्रेजी के खिचड़ीपन से बचाकर ठेठ होनी चाहिये क्योंकि इसस अभिनय की भाषा बाधित हो जाती है।

छत्तीसगढ़ी गाथाओं में अबाधित लय होती है, संवाद का चुटीलापन होता है, इसमें एक्शन के लिये लोक संगीत का प्रयोग बेहद जरूरी हो जाता है, क्योंकि संगीत भावों को स्पष्ट करता है, उसके टोन और एक्शन में आरोह–अवरोह के जरिये उसे गत्यात्मक बनाता है, जिससे बेसुरा भी यहां सुर में तब्दील हो सकता है, जरूरी है शब्दों की ध्वनियों को लयों में परिवर्तित करना, दुख का मूड हो तो तोड़ी का प्रयोग करें, पूजा भाव लाना हो तो यमन और भैरवी का प्रयोग करे।

इतना ही नही चाहे तो कसेट के जरिये पशु पक्षियों की आवाज को भी पार्श्व संगीत के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है, ध्वनि में आलाप, विलाप, संलाप सब समाहित है, बस उसे पकड़ने की कला होनी चाहिये या उसे स्वर के अलंकरणों में, तान, मुरकियों, मूर्च्छना या अपेक्षित रागों द्वारा भी प्रकट किया जा सकता है। नाट्य रूपांतरण में रंगों की भाषा की तलाश होनी चाहिये क्योंकि अभिनेता और सामाजिक के बीच रंग–भाषा ही संवाद कायम रख सकती है, हमारे यहां के कलाकारों रंग–भाषा की अद्‌भुत पहिचान है, इसी कारण तो वे यथा संवाद तक गढ़ लेते है, इससे संवाद की निरंतरता बनी रहती है। तीजनबाई के संवाद, स्वर, लय, टोन इतने प्रभावशील होते है कि अन्य अभिनेता गायकों की वे माडल बन गई है, शांति बाई चेलक इस ओर निरंतर प्रयत्नशील है।

प्रश्न :– पंडवानी कलाकारों की कलात्मक विशेषताएँ क्या है?
उत्तर :– तीजन बाई का चलना–फिरना, खड़े होना हर भाव भंगिमा में एक लय पैदा करती है, उनकी वाणी, स्वर का उतार–चढ़ाव, पिच–टोन पंडवानी के कथ्य और संवेदना को दर्शक की ओर संप्रेषित करती चलती है, लेकिन पूनम देवार जी (तिवारी) के अभिनय में हाथ, नेत्र, भौं, मुद्राओं, चेष्टाओ, गतियों द्वारा भाव की बारीकियों को व्यक्त करना, एकदम दुर्लभ और अनूठा रंगकर्म है। अन्य गायिकाओं रेखा देवार, रेखा जलक्षत्री, उषा बारले को इन चीजों को आत्मसात करना चाहिये। क्योंकि अभिनेता या गाथा गायक के लिये अब आब्जर्वेशन और एकाग्रता जरूरी हो गया। रंग–विवेक संवाद चेष्टाओं और गतियों से अभिनय कौशल में ताजगी आती है, यही वह तत्व है जो रंगमंच की शून्यता को खत्म किये रहती है। यदि गाथाओं में आए पुरूष पात्रों को अभिनय करना हो

या पुरूषों को स्त्री पात्र का अभिनय करना हो तो अस्वाभाविक नही केवल शब्दों के निकास में गहरी संवेदना हो जो उसके अर्थों को सामाजिक के हृदय में स्थापित कर सके।

(डॉ. योगेन्द्र चौबे)

———000———

प्रो. डॉ. गोरेलाल चंदेल से साक्षात्कार

प्रश्न :– आप लोक गाथा पंडवानी में छत्तीसगढ़ी संस्कृति का प्रभाव कैसे देखते है? और इसकी शुरूआत कैसे हुई होगी।

उत्तर :– जितनी भी लोकगाथाएँ है, वो हर जगह अलग–अलग रूपों में दिखाई देती है क्षेत्रियता का उसमें प्रभाव पड़ जाता है, जैसे ढोला मारू राजस्थान की लोकगाथा है, लेकिन छत्तीसगढ़ी में आके वो छत्तीसगढ़ की लोकगाथा बन गई। जैसे चंनैनी गुजरात की लोकगाथा है, लेकिन यहाँ आके वो छत्तीसगढ़ की लोकगाथा बन गई वैसे ही पंडवानी भी मै ये तो नही जानता कि वह कहा कि लोक गाथा है, लेकिन पंडवानी का विशुद्ध रूप से छत्तीसगढ़ी करण हुआ है हा सकता है पंडवानी दिल्ली क्षेत्र में प्रचलित लोकगाथा हो क्योंकि महाभारत का वो एरिया है लेकिन यहाँ आकर वो छत्तीसगढ़ की लोकगाथा बनी। जब छत्तीसगढ़ की लोक गाथा बनी तब छत्तीसगढ़ की पूरी लोक संस्कृति आकर जुड़ती है। किसी भी लोकगाथा का जब स्थानीय करण होता है तो स्थानीय संस्कृति उसमें आकर जुड़ जाती है और उसी संस्कृति के कारण उसका स्थानीय रूप एक अलग ढंग से होता है।

प्रश्न :– लोकगाथा पंडवानी और महाभारत की कथा में क्या समानताएँ व भिन्नताएँ है?

उत्तर :– आप देखेगे मूल महाभारत के कथानक से पंडवानी के कथानक में काफी अन्तर है। 18 VOLUM में महाभारत लिखा ये महाभारत पंडवानी में देखने को नही मिलेगा पंडवानी में कई ऐसी चीजे जुडेगी जो बिल्कुल लोक कथा है जो कपालिक व वेदमती शैली दोनो में देखने को मिलेगी।

सबल सिंह चौहान के महाभारत को लेकर वेदमती शैली चलती है जो दोहा और चौपाई में है। कापालिक शैली में तो बिल्कुल अलग कथा चलती है लेकिन वेदमती में भी लोककथा की चीजे आती है कापालिक में मुख्य रूप से भीम व अर्जुन की वीरता की चर्चा होती है, इनकी वीरता को लोककथा के साथ जोड दिया जाता है लोककथा के साथ जुड़ने के कारण कापालिक शैली में लोक सांस्कृतिक रूप ज्यादा प्रबल होता है शास्त्रीय शैली (वेदमती) में लोक सांस्कृतिक रूप उतना ज्यादा प्रबल नही रहता तो इसमें कापालिक शैली में लोक संस्कृति ज्यादा उभर कर आती है। इस शैली में लोक कथाएँ महाभारत से संबंधित हो ऐसा जरूरी नही है अन्य लेजेन्ट (चमत्कारिक) लोक कथाओं को कापालिक शैली में महाभारत की कथा में भीम, अर्जुन, द्रोपती जैसे पात्रों की कथा में चमत्कारिक लोक कथाओं के कारण रूपान्तरित कर दिया जाता है। सुनने वाले को ऐसा लगता है कि वह महाभारत की लोक कथाएँ है।

प्रश्न :– पंडवानी गायन की परम्परा कब शुरू हुई होगी?
उत्तर :– किसी भी लोक गीत के बारे में ये नही कह सकते कि ये कब शुरू हुआ बल्कि हम ये मानते है रामायण की प्रथा को वीर प्रथा के रूप में लोक में प्रचलित कथा रामायण को बाल्मिकी ने लिखा लेकिन बहुत से लोग कहते है कि वाल्मिकी रामायण के काल का है लेकिन वाल्मिकी के काल में रामायण की वीर कथा जो लोक में प्रचलित थी उसी को वाल्मिकी ने रामायण के रूप में लिखा। इसका इतिहास ढूँढने पर पता लगेगा की अमुख ने महाभारत की कथा गाई क्योंकि निश्चित रूप से यह लोक में प्रचलित है इसलिए गाई जैसे–जैसे लोक का विकास हुआ वैसे–वैसे उनमें

अलग–अलग तरह की प्रचलित गाथाओं को गाने की परम्परा विकसित हुई। इसका निश्चित इतिहास बताना संभव नही है और इसका कोई समिक्षित इतिहास बताता है तो मै उसे मूर्ख कहूँगा।

प्रश्न :– आपके अनुसार पंडवानी गायन की प्रस्तुति शैली कैसी है?

उत्तर :– अधिकांश कापालिक शैली वाले खडे होकर गाते है, और वेदमति शैली वाले बैठकर गाते है लेकिन जब बैठकर गाते है तो भी जब वीर कथाए आती है तो उछल पड़ते है और घुटनों के बल खड़े होते है। कापालिक शैली वाले लोग जो खड़े होकर गाते है उनका पूरा मूवमेंट खड़े होकर रहता है जैसे तीजन बाई खडे होकर गाती है।

प्रश्न :– क्या पंडवानी शैली को नाटिकता के अनुसार भी देखा जा सकता है? बहुत से लोग कहते है कुछ कलाकारो को ज्ञान का आभाव है इसलिए वह बैठकर गाने वाले को वेदमती व खड़े होकर गाने वाले को कापालिक शैली कहते है क्या ऐसा कहना उचित होगा?

उत्तर :– जिस शैली में नाटकीयता बहुत अधिक उस शैली को खड़े होकर गायक स्वयं गाता है और मजा लेता है। कापालिक शैली में बहुत ज्यादा नाटकीयता है, और वेदमती शैलो में उतनी अधिक नही है इसलिए उसे बैठकर गाते है लेकिन जब वेदमती शैली में नाटकीयता क्षण भर के लिए आती है तब–तब वह उछल पड़ते है घुटनों के बल खड़े हो जाते है। इसमें मुख्य चीज नाटकीयता है ज्ञान व अज्ञान वाली बात नही है, आप पूरी की पूरी परम्परा को रिजेक्ट कर रहे हो वह अज्ञानी है ऐसा कहकर आप कापालिक परम्परा का

रिजेक्ट कर रहे हो। निश्चित तौर पर यदि इतिहास तलाशने जाओगे तो महाभारत की कापालिक शैली ही पुरानी शैली मिलेगी। शास्त्रीय शैली में जब महाभारत लिख लिया गया लोगो ने उसे पढ़ा पढ़ने के बाद फिर वो शुरू किया और कापालिक शैली तो पता नही महाभारत की रचना नही हुई रही होगी उसके पहले से चली आ रही है क्योंकि कथा के रूप में लोक जीवन में प्रचलित रहा होगा उसका रूप अलग रहा होगा हो सकता है, उसमें कैरेक्टर का नाम भीम का कुछ और रहा होगा, अर्जुन का कुछ और रहा होगा लेकिन वो प्रचलित रहा होगा और मै ऐसा मानता हूँ कि जिसमें जितनी अधिक नाटकीयता होगी वो उतनी ही अधिक लोक शैली से जुडा होगा।

प्रश्न :– क्या पंडवानी में मंचो की कोई परम्परा रही होगी?
उत्तर :– नाट्य शास्त्र में आचार्य भरत ने जिस तरह से मंचों का वण्रन किया, खुला मंच गोल घेरे में आदमी खड़े है और बीच में प्रदर्शन हो रहा है, ऋग्वेद में समन करके उत्सव का वर्णन आता है, उस उत्सव में भी जो मंच बताते है, वो खुला मंच है पंडवानी भी खुले मंच में नाचा की ही तरह हुआ है तो जो मंचों के विकास की परम्परा है वो तो काफी बाद में आई है पहले खुला मंच में ही रहा है।

प्रश्न :– लोकगाथा का रंगमंच पर आप कैसे प्रभाव देखते है?
उत्तर :– लोकगाथा का रंगमंच में प्रभाव आप देखेंगे तो सारा नाट्य तत्व आचार्य भरत ने कहा कि मै जितना जानता हूँ उतना मैने लिखा इससे अधिक आपको जानकारी चाहिए तो लोक के पास जाओ वहॉ इससे अधिक जानकारी मिलेगी, तो निश्चित तौर पे नाट्य तत्व, अभिनय तत्व एव्रिथिंग कही न

कही प्रारंभिक अवस्था से लोक से आया है और जिसको हम शास्त्रीय नाट्य कहते है, शास्त्रीय नाट्य का विकास तो बाद में हुआ संस्कृत काल में हुआ बल्कि आचार्य भरत के बाद ही हुआ है तो शास्त्रीय नाट्य के पहले भी आचार्य भरत ने लिखा होगा कहा से लिखा होगा किसको देखकर लिखा होगा आप इतना तो मानते है न कि कोई भी रचनाकार लिखेगा तो अपने परिवेश में प्रचलित चीजों के अनुभव को बटोर के लिखता है तो आचार्य भरत ने जो लिखा तो उस दौर में लोक में जो कुछ प्रचलित रहा होगा उसको देखकर उसने उसका शास्त्रीयकरण किया उसके नियम बनाए मंच के लेकिन निश्चित तौर पर नियमों से अलग हटकर एक मंच लोक में रहा होगा उसको आचार्य भरत ने उसे देखा और देखकर एक व्याकरण तैयार कर दिया। पाणिनी ने जब भाषा का व्याकरण बनाया तो पाणिनि ने भी लोक में प्रचलित भाषा को पकड़कर फिर उसका व्याकरण बनाया।

अब कथक नृत्य को देखिए निश्चित तौर पे लोक में नृत्य प्रचलित था तो एक नृत्य का विशेष रूप देकर उसका व्याकरण तैयार करना वो कथक हो गया इसलिए ये प्रश्न कि लोक का मंच पर क्या प्रभाव था उतना बेहतर नही है जितना ये बेहतर है कि नाट्य लोक में मंच तत्व कैसे आया।

प्रश्न :– रंगमंच में जो सूत्रधार होता है क्या वह लोकगाथा से आया है?

उत्तर :– सूत्रधार लोकनाट्य नाचा में रहा है लेकिन इन गाथाओं में सूत्रधार जैसी कोई चीज नही रही। नाचा क्योंकि लोक नाट्य की परम्परा है गाथाओं में लोक नाट्य का प्रभाव तो रहता है लेकिन वो टोटली लोक नाट्य नही है इसलिए नाचा का विकास अलग ढंग से हुआ सब एक ही चीज से

विकसित हुए हो ऐसी बात नही है इसलिए नाट्य में सूत्रधार की जो बात आती है वो मुझे लगता है कि संस्कृत काल में कथा को आगे बढ़ाने के लिए नाट्य तत्व से सूत्रधार को लिया।

प्रश्न :– पंडवानी की नाटकीय विशेषता कौन–कौन सी है?
उत्तर :– आप नाट्य की जितनी विशेषता पढ़े होंगे सबको उठाके पंडवानी से जोड़कर देखना वो सारी विशेषताएँ मिलेगी इसे एक दो विशेषता कहके उसे समेटिए मत। आपके स्थूल अभिनय, सूक्ष्म अभिनय, तमाम चीजे मिलेगी जैसे नाट्य में भी चेहरे का भाव है आँखों का भाव है, हाथ पैर के अभिनय है नृत्य का अभिनय है वो सारी चीजे मिलेगी इसमें। और पंडवानी ही नही जितनी भी लोक गाथा है वो सबमे मिलेगी।

प्रश्न :– क्या पंडवानी का प्रयोग लोक नाट्य नाचा में भी किया जाता है?
उत्तर :– पंडवानी का प्रयोग नाचा में कभी–कभी बीच में जोकर लोग शुरू कर देते है लेकिन वो सुनियोजित नही है एक पारम्परिक तौर पे योजनाबद्ध ढंग से नही है कि इसमें होगा ही ऐसा नही है, जब उस तरह की नाचा की जो विषय वस्तु है उस विषय वस्तु में उस तरह कि कोई बात आती है तो फिर वह शुरू करते है लेकिन वहा तम्बूरा पकड़े नही, अपने हाथ को ही तम्बूरा बना दिया और शूरू कर दिया।

प्रश्न :– पंडवानी गायन बाजारीकरण से किस तरह प्रभावित है?

उत्तर :– जैसे–जैसे समय आगे बढ़ता जाता है वैसे–वैसे परिवर्तन आते जाते है चीजे वही की वही पारम्परिक तौर पे नही रहेगी परिवर्तन तो आएगें ही ये हर चीज में पहले कलाकार पारम्परिक ढंग से बड़े मंचों पर गाते थे तो उनके गायन में भी काफी परिवर्तन आया है वो भी ओरिजनल चीज नही गाते उनके गायन में लटके–झटके आना शुरू हो जाता है और इसके पीछे बड़ा कारण बाजारीकरण होता है बाजार में जिस चीज की डिमान्ड जितनी अधिक होगी उत्पादक वैसे ही चीज बनाते है टी शर्ट का फैशन चला तो बड़े–बड़े कारखाने वाले टी शर्ट बनाने लगे क्योंकि बजार की डिमान्ड है श्रोता की डिमान्ड जिस तरह होती है उस तरह का परिवर्तन होता है।

प्रश्न :– वर्तमान समय में पंडवानी को कैसे देखे?

उत्तर :– वर्तमान समय में पंडवानी को केवल इस रूप में देखा जा सकता है कि ये अब लोक की चीजे नही रह गई है केवल मंच की चीजे रह गई है। अब मैं समझता हूँ कि कोई तीज त्यौहार में या कोई पर्व में या किसी अवसर पर गॉवों में उस तरह की पंडवानी गायक नही मिलेगा हमने देखा है कि त्यौहार है आज दोपहर बाद बैठ गए पंडवानी गाने उस तरह मैने देखा है बैठ गए आल्हा गाने, उसके लिए कोई मंच सजा हो या कुछ करो बैठे चबूतरे में और पंडवानी गाना शुरू कर देते थे अब उस तरह के पंडवानी गायक नही रह गए है और है भी तो उसको सुनने वाले नही रह गए है अब जो पंडवानी गायन होता है वो मंचों में होता है, और मंचों में जब होता है तो बजार की डिमान्ड के अनुरूप होता है और इसलिए उसमें उस तरह का परिवर्तन आता है, उस तरह के लटके–झटके आते है बजार की तरह लोक संस्कृति का बाजारीकरण या व्यवसायीकरण लोक संस्कृति को बजार की दिशा में परिवर्तित

करते है जैसे थोड़ी देर के लिए ददरिया यह श्रम गीत है और आपको मालूम होगा कि वो केवल और केवल खेतों में काम करते हुए गाया जाने वाला गीत है लेकिन आज मंच में एक लड़की और एक लड़का नाचते हुए ददरिया गा रहा है और लोग ताली बजा रहे है। दिल्ली के लोग छत्तीसगढ़ को नही जानते वो क्या समझेंगे ददरिया ऐसे ही गाया जाताहै और लोक का जो मुख्य रूप है वो गायब है आज भी ददरिया गाते है काम करते हुए लेकिन वो कही भी हाईलाईट नही है, हाईलाईट ये मंच पर गाने वाले लोग होते है तो वैसे ही लोक गाथाओं में ही होगा चाहे किसी भी गाथा में देखिए चंनैनी गाने वाले गॉव में तीज त्यौहार में गायब है, मंचों में चंनैनी हो रहा है इवन नाचा गायब हो चुका है अन्यथा गणेश पक्ष में कोई गम्म ऐसा नही होता था जब रात भर नाचा न हो और सबेरे गणेश न निकाले। आज कहा ऐसा होता है। ऐसा व्यवसायीकरण के कारण होता है पैसा के कारण। और हर कोई चाह रहा है कि मै रेडियो तक पहुँच जाऊ और उसके बाद मुझको मंच मिल जाए। ये हमारे दिमाग में बाजा इतना बैठ गया है कि हम हर चीज को बाजार में तौल रहे है और इसलिए बाजार के अनुसार हम अपनी कला को बनाने की कोशिश कर रहे है और ये तो सभी कला में हो रहा है लोक कला हो या शास्त्रीय कला।

आप देख लीजिए बाजार में हमारी जो मौलिक कला है, उसको बाजार ने बहुत ज्यादा प्रभावित किया है। यही पंडवानी में होता है, जो आप एक एक कैरेक्टर को बनाकर उसको गवाते है या नचवाते है यही बाजारीकरण है और फिर वाह–वाही लूटते है, कि नया प्रयोग किया है, क्या बात है, लेकिन उसकी ओरिजनलिटि कहा है नया प्रयोग तो हुआ।

प्रश्न :– ये प्रयोग सही है या गलत है?

उत्तर :– आप बताइए बाजार सही है कि गलत है। याने हर आदमी को बाजार उपभोक्ता पशु बना देता है तो उपभोक्ता पशु बनना ज्यादा उचित है, कि मनुष्य बनना ज्यादा उचित है। बाजार तो यही काम करता है बाजार को तो चाहिए कि पैसा कमॉऊ, अधिक से अधिक लाभ कमॉऊ और अधिक से अधिक लाभ कमाने के लिए अपनी कला को जितना विकृत रूप देना है आप देते है।

कुछ म्यूजिक कम्पनियों ने छत्तीसगढ़ के लोक गीतो को कितना विकृत बनाया है, आप देखिए किसलिए बाजार के लिए और वही लोकगीत सब चल रहे है, ये बाजार के कारण। तो किसी भी कला में जब बाजार का प्रवेश होगा तो निश्चित तौर पर कला में विकृति आएगी, कला का स्वभाविक विकास हुआ है तो कभी उसमें विकृति नही आएगी समय के अनुसार उसमें बदलाव आएगे लेकिन उसमें बदलाव जब आएगा तो दूसरी जगह की कलाए जो लोक कलाए है वो उसमें आकर जुडती जाएगी और वो विकसित होता जाएगा उसका एक नया रूप आगे बढ़ता जाएगा लेकिन जब बाजारीकरण होगा तो केवल बाजार की कला ही उसमें दिखाई देगी और आपकी जो पारम्परिक कला है, ये जो गायब होती जाएगी उसमें विकृति आएंगी। ये बाजार का कैरेक्टर है।

प्रश्न :– पंडवानी की सम्भावनाएँ क्या देखते है भविष्य में?

उत्तर :– मैने जब साउथ सैन्ट्रल जोन एक प्रोजेक्ट ददरिया पे काम किया तो खमतरी में खेत की निंदाई करते हुए ददरिया गाने वाली फिल्म को रिकॉर्ड किया खेत में, दिल्ली से आया उसका वीडियो रिकॉर्ड करने वाला वो इतना गदगद हो गया था कि खेत के भीतर उस आवाज को पकड़ने के लिए इतने इतने कोचड़ में माइक लगाया था और उसने ये बताया कि सर मैं पन्द्रह–सोलह साल से ऑल ओव्हर इन्डिया

में घूम–घूमकर रिकॉर्ड कर रहा हूँ लेकिन ऐसे रिकॉर्डिंग का अनुभव मेरा कही नही है उस समय मैने ददरिया गाने वाली महिला से पूछा कि आज कल की बहू बेटिया ददरिया से दूर भागती है पढ़ी लिखी है उनको तो फिल्मी गाना गाना है ये सब पसंद नही ये क्या तुम लोगो के बाद खत्म हो जाएगा उसका जवाब भले ही ये लइकामन नही गए सर लेकिन ये कभी खतम नही होगा कोई न कोई गवईया पैदा होई। वैसे ही ठीक है पंडवानी का रूप बदल जाएगा हबीब तनवीर ने प्रयोग किया उस तरह नाटको में दिखाई दे जाएगा या भिलाई में जैसा कह रहे है वैसा उसका रूप दिखाई दे जाएगा। लेकिन पंडवानी की जो शैली और कथा है ढूंढना पड़ेगा कही न कही वो मौजूद होगा भविष्य में। लोक में नही है गाने वाले लेकिन जा के पूछोगे कि पंडवानी को जानते हो क्या आज के जो पन्द्रह–बीस साल के बच्चे है उनको छोड़ के बाकी लोग कहेंगे कि हॉ हम पंडवानी जानते है ये गाते थे इतना बढ़िया गायह है तो कही न कही वो कला रहेगी क्योंकि लोक कलाओं में बड़ी जीवनीशक्ति रहेगी क्योकि जीवन के भीतर से वो कला पैदा हुई है ये कहा जाता है कि जीवन की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए काम करते हुए कार्यकलापों के भीतर से जो कला पैदा होती है, वो कभी नही खत्म होती तो जब तक काम करने वाले रहेंगे मेहनत करने वाले रहेंगे तक तक वो कला जीवित रहेगी ऐसा मेरा मानना ह।

(गोरेलाल चंदेल)

नरेन्द्र बहादुर सिंह युवा रंगकर्मी से साक्षात्कार

प्रश्न . लोकगाथा को आप रंगमंच से कैसे जुड़ा हुआ मानते है ?

उत्तर. लोकगाथा में प्रचलित लोकनायक की कथाएँ उनके जीवन अनुभव व संघर्ष की धुरी पर स्थपित है यह पीढ़ी दर पीढ़ी जिस परम्परा रुपी प्रवाह में बहती हुई हम तक पहुँची उस प्रवाह में उन्होंन समय काल के थपेड़े में अपने आप को खूब बदला या यूँ कहे की कदम दर कदम गायक दर गायक संवरती गई, मैं बघेल खंड में प्रचलित यादव जाति ,कुम्हार,गोंड,आदि की गथाओ की बात करें तो इन में अभिनय (नाट्य) तत्वों की भरमार है |नाट्य को जब हम सारी कला विधाओ का मिश्रण और उत्कृष्ट रूप मानते है तो ऐसे में हम गाथाओं को नाट्य से जुड़ा हुआ ही नहीं बल्कि अभिनय की प्रथम सीढ़ी माने | पंडवानी ,छाहुर,चैन्दैनी,ललना,चंदनुआ, गद केकती आदि गाथाओं के अलावा गोंड प्रधान की बना गायकी इस सवाल का बेहतर उदाहरण होगा | गोंड प्रधान की बना गाथा गायकी में
गाथा से गोंड पेंटिंग और गोंड पेंटिंग से पुनः गाथा और नाट्य हो जाने तक का सफ़र तय किया मैं उन गाथा गायक समूहों को जनता हूँ , जिन्होंने अपनी गाथा गायन शैली को नाट्य शैली की ओर मोड़ा है| उन्होंने गाथा के चरित्रों और नाट्य के चरित्रों के बीच की पतली रेखा को लाँघ कर उसे नाटक जैसे रूप दिया है, उनकी उस गाथा गायन शैली में निहित नाट्य तत्व अब पूर्ण स्वतंत्रता और व्यापकता के साथ उन कलाकारों द्वारा प्रस्तुत किए जा रहे प्रह्सनो व गाथाओं के बदलते हुए स्वरुप में प्रस्तुत होते है |

गाथा गायन और नाट्य दोनों अपने आप में स्वतंत्र विधाएं है दोनों की प्रस्तुति शैली में भी अंतर है लेकिन नाट्य तत्व दोनों में ही मौजूद है ,नाट्य में हम उसका व्यापक रूप देख सकते है और गाथा में थोडा कम लेकिन दोनों का पात्र गुजरता एक ही स्थिति से है |

प्रश्न : लोकगाथा पंडवानी ,चाहुर,चंदनुआ और चंदैनी की प्रस्तुति शैली की समानता व भिन्नता को समझाएं |

उत्तर. लोकगाथा पंडवानी ,चाहुर,चंदनुआ और चंदैनी की प्रस्तुति शैली में नाटकीय तत्वों के स्तर पर ही थोड़ी भिन्नता है| बाकी दोनों तरहा की गाथा गायन शैली अधिकाधिक समानताएं है | नाटकीय तत्वों से मेरा मतलब परम्परा और उसमें हुए प्रयोगों और समाज की स्वीकरोति का भी है | पंडवानी हमारे सामने आज जिस रूप में है वो परम्परा का परिष्कृत रूप है जब की चंदनुआ,छाहुर आदि गाथाएँ आज भी प्रयोगों के साथ नहीं है ,वह अब तलक विशुद्ध पारंपरिक कथा गायन शैली रूप में है| पंडवानी में छत्तीसगढ़ के तमाम अलग-अलग कलारूपों ,उनकी धुनों को प्रयोग कर अब प्रस्तुत किया जा रहा है जबकि छाहुर ,चंदनुआ अपने पारंपरिक रूप और एक ही नायक की गाथा को लेकर एक ही लय में प्रस्तुत होते है ,इन दोनों गाथाओं की कथाएँ एक विशेष जाती अहीर की प्रतिनिधि नायको पर आधारित है | जब की पंडवानी का कथानक महाभारत कथा पर आधारित होने के कारण व्यापक और प्रभाव पूर्ण है छाहुर ,चंदनुआ की प्रस्तुति शैली कथा शैली के ज्यादा नजदीक है, इस कारण उन में नाट्य तत्वों की व्यापकता कम ही देखने को मिलती हैं , जबकि पंडवानी नित नये नाट्य भाषायी कलेवर में हमारे समक्ष प्रस्तुत हो रही है |

प्रश्न : आधुनिक रंगमंच में लोकगाथाओं का प्रयोग आप कैसे देखते हैं |

उत्तर. आधुनिक रंगमंच में लोकगाथाओं का प्रयोग किस रूप में आगे चलकर उपयोगी होगा इस को हम अभी के दिनों में हो रहे उन पर नाट्य प्रयोगों से देख सकते है | छाहुर ,चंदनुआ ,चैदैनी,हरदौल तमाम लोक गथाओ पर नाटक तैयार किए गये है ,कुछ बेहद सफल भी रहे है सफल वही हुए हैं जो गाथा की नाट्य भाषा को ध्यान में रखकर प्रस्तुत हुए है जिनमें लोक का रियलिज्म नजर आया है, मैं मानता हूँ की गथाओ पर किए गये नाट्य लोकनाट्य रूपों से

भिन्न रंगभाषाओ में प्रस्तुत हो रहे है और यही एक भिन्नता आधुनिक रंगमंच के परिदृश्य पर उपयोगी साबित होगी |

प्रश्न : क्या आने वाले समय में अधिकतर लोकगाथा का स्वरुप समाप्त होकर नाटक का ही अंग हो जाएगा व लोक गाथा का रूप त्याग देगा ?

उत्तर. छाहुर,चंदनुआ का स्टेज प्रस्तुति का अभी तक कोई मार्केट नहीं बना पाया है न पहले ही था | इन की प्रस्तुतियाँ विशेष तीज त्यौहार के मौके पर या किस्सा गोई परम्परा में होती थी और आज इन पर नाट्य प्रयोग किए जा रहे है जो सफल है मैं मानता हूँ ज्यादा वक्त नहीं है इन्हें विलुप्त होने में क्योकि यह पिछले दशक से वेंटिलेटर पर है |

(नरेन्द्र बहादुर सिंह)

———000———

छायाप्रति

तीजन बाई पंडवानी की उत्कृष्ट कलाकार

भाव अभिनय

मंजू बाई राम टेके युवा कलाकार

ऋतू वर्मा वेदमती शैली की महिला कलाकार

पारम्परि रूप से पंडवानी प्रस्तुति घर के आंगन में

ऋतू वर्मा भीम का अभिनय करते हुए

पंडवानी में तानपुरा का प्रयोग

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

पुस्तकें –

(1) डॉ. सिन्हा सत्यव्रत, भोजपुरी लोकगाथा

(2) अमर कोष का अध्ययन

(3) ग्रियर्सन जी.ए., पापुलर सांग,

(4) पौंड़ लूसी, इन्साइक्लोपीडिया अमेरिका का बैलेट

(5) डॉ. तिवारी रूद्रदत्त, बॉस गीतो का लोक तात्विक अध्ययन

(6) डॉ. शर्मा शकुन्तला, छत्तीसगढ़ी लोक जीवन और लोक साहित्य का अध्ययन

(7) डॉ. निर्मलकर बलदाऊ प्रसाद, महाभारत और छत्तीसगढ़ी लोकगाथा, पंडवानी का तुलनात्मक अध्ययन

(8) महाभारत आदि पर्व, नम्र निवेदन

(9) शुक्ल, दयाशंकर, छ.ग. लोक साहित्य का अध्ययन,

(10) डॉ. पाठक विमल कुमार, पंडवानी गायक

(11) श्री तिवारी रामहृदय – पंडवानीः लोकतत्व की त्रिवेणी

(12) डॉ. श्रीधर परंजपे शरच्चन्द्र, भारतीय संगीत का इतिहास

(13) यादव पी.सी. लाल, छत्तीसगढ़ पंडवानी कथा गायन एक अध्ययन

(14) डॉ. यदु हेम, छत्तीसगढ़ का पुरातात्विक वैभव, बी.आर. पब्लिकेशन, कार्पोरेशन 2002

(15) डॉ. हेमंत निर्मला, आधुनिक हिंदी नाटककारों के नाट्य सिद्धान्त

(16) पं. कथावाचक राधेश्याम, मेरा नाटक काल

(17) रस्तोगी गिरीश, हिन्दी नाटक सिद्धान्त और विवेचना

(18) डॉ. क्रांतिमलि, हिन्दी नाटकों की शिल्पविधि का विकास

(19) डॉ. शर्मा नीलिमा, साठोत्तरी हिन्दी नाटक

(20) जैन नेमीचंद, रंगदर्शन

(21) महावर निरंजन, पंडवानी, महाभारत की एक लोक नाट्य शैली

(22) गैरोला वाचस्पति , भारतीय नाट्य परम्परा और अभिनय दर्पण

(23) पं. चतुर्वेदी सीताराम, भारतीय तथा पाश्चात्य रंगमंच

(24) डॉ. चौबे योगेन्द्र, आधुनिक रंगमंच में छत्तीसगढ़ी लोकगाथा का अभिनय एवं संगीत पक्षः एक अध्ययन

(25) मध्यप्रदेश की लोकगाथाएँ, संगीत के दृष्टिकोण से

(26) पं. शुक्ल शास्त्री बाबूलाल, भाग 2 – नाट्य शास्त्र

(27) आचार्य नन्दिकेश्वर, अभिनय दर्पण

(28) अग्रवाल महावीर, हबीब तनवीर का रंग संसार

पत्रिकाएँ –

(1) तिवारी नन्द किशोर, पंडवानी मेला स्मारिका,

(2) तिवारी नन्द किशोर, पंडवानी, चौमासा अंक 4

(3) डॉ. शुक्ल नारायण केशरी, आयाम ''सापेक्ष'' लोक संस्कृति

(4) पटेल केदारनाथ, अविनाषी समयदास, प्रबोध छत्तीसगढ़ी सामान्य ज्ञान

(5) माथुर जगदीशचन्द्र, चौमासा पत्रिका, अंक 34, वर्ष 1996

(6) उपाध्याय रामनारायण, चौमासा पत्रिका, अंक 34, वर्ष 1996

(7) डॉ. पाठक विमल कुमार, छत्तीसगढ़ पर्व के गौरव पत्र से दीपावली विशेषांक 90 से उद्धत

(8) देशमुख रामचन्द्र, चन्दैनी गोंदा, स्मारिका

(9) महाभारत, गीताप्रेस गोरखपुर, श्लोक

(10) इनसाइक्लोपिड़िया, नेट सर्च

(11) किशोर शुक्ल नवल, चौमासा अंकः11ः पंडवानी,

(12) पंडवानी, मोनोग्राफ, म.प्र.अ.लो.क.प., भोपाल

(13) तिवारी नन्द किशोर, भरथरी, म.प्र. आदिवासी लोक कला परिषद भोपाल

———000———